

कुछ उत्तमोत्तम पुस्तकें

दुलारे-दोहावली	२)	छायावाद	२।।)
श्रौंगन	२)	देव और बिहारी	४।।)
अपने गीत	१।।)	देव-सुधा	२।।।)
ऊपा	॥=), ॥।=)	निरकुण्ठा-निदर्शन	१), १।।।)
धडकन	२।।)	नैपथ-चरित-चर्चा	२।)
धधकती ज्वाला	।=)	पत और पल्लव	१।।)
परिमल	४)	पृथ्वीराज-गसो के दो	
प्राण	२)	समय	२।।)
मेघमाला	१), १।।।)	भवभूति	॥।=), १।।=)
भेन के गीत	१), १।।।)	बिहारी-सुधा	॥=)
जय हिंद	।)	बिहारी-दर्शन	५।)
राष्ट्रीय गायन	।=)	मिश्रबधु-विनोद (भाग दो,	
विलव और बिहार	२)	तीन) मूल्य क्रमशः	३), ४)
रक्तजित काश्मीर	।।)	मान-मयक	१।), २)
शारदीया	१।।।)	सक्षित हिदी-नवरत्न	२।), ३)
हृदय का भार	१।।)	सौंदरानंद-महाकाव्य	॥।), १।।)
चिरस्पर्श	१।।)	हिदी के उपन्यासकार	३।)

जब कोई पुस्तक मँगानी हो, तो हमें पत्र अवश्य लिखिए--

संचालक गंगा-पुस्तकमाला-कार्यालय

३६, गौतम बुद्ध-मार्ग, लखनऊ

गंगा-पुस्तकमाला का ६१वाँ पुष्प

पाली-प्रबोध

लेखक

पं० आद्यादत्त ठाकुर एम्० ए०, काव्यतीर्थ

[पाली, प्राकृत और संस्कृत के अथ यापर.

भूतपूर्व, लाहौर-विश्वविद्यालय]

— १० :—

मिलने का पत्र
गंगा-ग्रंथालय सं. 604
३६, गौतम बुद्ध-मार्ग, लाहौर
लाहौर

द्वितीय सरकार] स० २००६ वि०

[१०००]

प्रकाशक
श्रीदुलारेलाल
अध्यक्ष गंगा-पुस्तकमाला-कार्यालय
लखनऊ

अन्य प्राप्ति-स्थान—

१. भारती-भाषा-भवन, ३८१०, चर्खेवालाँ, दिल्ली
२. राष्ट्रीय प्रकाशन-मंडल, मञ्जुआ-टोली, पटना
३. प्रयाग-प्रथागार, ४०, क्रास्थवेट रोड, प्रयाग

नोट—इनके अलावा हमारी सब पुस्तकें हिंदुस्थान-भर के प्रधान बुकसेलरों के यहाँ मिलती हैं । जिन बुकसेलरों के यहाँ न मिलें, उनका नाम-पता हमें लिखें ।

सर्वाधिकार प्रकाशक के अधीन

मुद्रक
श्रीदुलारेलाल
अध्यक्ष गंगा-फाइनआर्ट-प्रेस
लखनऊ

वक्तव्य

भारतवर्ष में 'पाली' के पठन-पाठन का पुनरुद्धार हो रहा है। विश्वविद्यालयों की परीक्षाओं में तो 'पाली' पाठ्य विषयों में से है ही; कलकत्ता-मैट्रिक-बोर्ड की उच्चतम परीक्षाओं में भी 'पाली' प्रविष्ट हो चुकी है। यह संतोष की बात है। परंतु पाली-साहित्य की पुस्तकें देवनागरी-अक्षरों में अभी तक नहीं के बराबर हैं। व्याकरण पर तो नागरी-अक्षरों में अथवा हिंदी-भाषा में कोई पुस्तक ही नहीं। पं० विधुशेखर भट्टाचार्यजी ने अपने पाली व्याकरण में उदाहरण अवश्य नागराक्षर में दिए हैं, परंतु नियम और लक्षण आदि की भाषा बंगला है, और अक्षर भी बंगला, जिससे बंगला न जानने-वाले छात्र सबसे यथार्थ लाभ नहीं उठा सकते। हिंदी में इस अभाव की पूर्ति करने के लिये मेरे माननीय मित्र पंडित बदरीनाथजी भट्ट तथा सुहृद् श्रीयुक्त दुलारेलालजी भार्गव ने मुझसे आग्रह किया, परंतु अपनी अल्पज्ञता के कारण इतने बड़े महत्त्व-पूर्ण कार्य में द्रष्ट होने का मुझे साहस न हुआ। मुझे आशा थी कि और योग्यतर विद्वान् इस अभाव की पूर्ति करने में अवश्य ही अग्रसर होंगे। परंतु मेरी आशा पूर्ण नहीं हुई और अंत में मुझे ही यथाकथंभविस्व इसका संपादन करना पड़ा। व्याकरण में मध्य उदाहरण और नियम निकालना यथार्थ मौलिकता है, इसके लिये न मुझे अवकाश था और न साधन। मेरे लिये प्रधान पथ-प्रदर्शक हैं श्रीयुक्त विधुशेखर भट्टाचार्यजी। इनके पाली-प्रकाश ने मेरा माग अत्यंत सरल पर दिग, और अधिकतर नियम और उदाहरण सभी में से लिए गए हैं। इनके

लिये श्रीयुत भट्टाचार्यजी का मैं विशेषतः ऋणी हूँ । किसी-किसी प्रकार में म्यूज़र और डुरोसीज़ का क्रम मुझे कुछ अच्छा प्रतीत हुआ, वह उनकी पुस्तकों में से लिया गया है, और इस तरह इन तीनों पुस्तकों के आधार पर यह पुस्तक तैयार हुई है । सद्गिष्ठ स्थलों में जर्मन-विद्वान् विंटरमिज़ के पाली व्याकरण से साहाय्य मिला, और इसके लिये मेरे माननीय अध्यक्ष श्रीयुत सुब्रह्मण्य अय्यर महोदय घन्यवाद-भाज्य हैं, जिन्होंने कृपा करके जर्मन-पुस्तक में देखकर मेरे सदेहों का निराकरण किया ।

आद्यदत्त ठाकुर

वक्तव्य

[द्वितीय संस्करण पर]

इस संस्करण में प्रस्तावना रूप से कतिपय ज्ञातव्य विषयों का समावेश कर दिया गया है । मूल ग्रंथ में कोई विशेष परिवर्तन नहीं है । अनेक विश्वविद्यालयों ने उसे पाठ्य पुस्तक रूप से नियत करने का औदार्य दिखाया है, यह हर्ष की बात है ।

लखनऊ
१३ अगस्त, १९५२ ई० }

आद्यदत्त ठाकुर

प्रस्तावना

पाली-भाषा के संबन्ध में विद्वज्जनों में अत्यन्त मतभेद दृष्टिगोचर होता है। पंडित बटुकनाथ शर्मा साहित्योपाध्याय 'पालिजातकावलि' की प्रस्तावना में अनेक मतों का विवेचन करके अंत में निम्नलिखित हैं—“यहाँ पर विवाद-ग्रस्त विषय का उत्थान करना व्यर्थ है। इतना ही ध्यान देने योग्य है—पाली नाम की भाषा है। इस भाषा में बौद्धों के मूल धर्म-ग्रन्थ लिखे हुए प्राप्त होते हैं। इस भाषा में लोक अथवा जनपद के नाम में अथवा नामकरण नहीं प्राप्त किया है। पालि शब्द पहले मूल ग्रन्थ के अर्थ में प्रयुक्त हुआ, उसके बाद काल-क्रम से मूल ग्रन्थ की भाषा को च्योतित करने लगा।” इसमें पूर्ण-यह लिखते हैं—“निस्सन्देह यह उम समय में मगध में उपयुक्त होने-वाली कोई भाषा है। भगवान् बुद्ध 'मागध' में। मगध देश में उनका जन्म था, यह सर्वत्र विश्रुत ही है। यही उनकी भाषा मागधी थी। परंतु यह मागधी, प्राकृत व्याकरणों में जिसका उल्लेख है, वह मागधी नहीं हो सकती, क्योंकि यह अर्वाचीन है। और वह प्रतिप्राचीन। दानो का भेद बताने के लिये बुद्ध प्रयुक्त मागधी से बौद्धमागधी कहा जाता है। यही बौद्धमागधी मूल ग्रन्थ की भाषा होने के कारण बाद में पाली नाम में प्रसिद्ध हो गई।”

मूलग्रन्थाचक पाली शब्द भाषा के लिये कैसे प्रयुक्त होने लगा, यह ठीक तौर से नहीं कहा जा सकता। शर्माजी का अनुमान है कि काल-क्रम से बौद्ध वचन विस्तृति-पथ में आने लगे, तब बौद्ध उनके मुद्रित रखने की ओर ध्यान देने लगे, और मूल ग्रन्थ के अर्थ और उनकी भाषा दोनों को च्योतित करने के लिये 'पालि' शब्द का व्यवहार करने लगे।

भाषा-विज्ञान के प्रकाश पंडित श्रीयुक्त मुनीतिकुमार चाटुप्या का मत इससे भिन्न है। इनका कथन है—“बुद्ध देव के समय तक पूर्वाय भाषा

वैदिक तथा लौकिक दोनों से ही भिन्न रूप में विकसित हो चुकी थी, और यह एक स्वतंत्र भाषा समझी जाने लगी थी। जब भगवान् बुद्ध तथा महावीर ने अपना दार्शनिक आंदोलन—वैदिक बलिप्रदान आदि प्रथा के प्रतिकूल—छेड़ा, तो उन्होंने संस्कृत का आश्रय नहीं लिया। वे एक ऐसी भाषा का आश्रय लेना चाहते थे, जिसमें उनके विचार जनमाधारण तक पहुँच सकें। अतएव उन्होंने आर्यभाषा के इस पूर्वीय रूप को पकड़ा, जो उस समय पूर्व-उत्तर-प्रदेश तथा बिहार में प्रचलित था। भगवान् बुद्ध तथा महावीर ने जब अपना उपदेश उस पूर्वीय भाषा में (Eastern dialect) दिया था, तब इसे साहित्यिक रूप प्राप्त हो चुका था। पाली से पूर्व की भाषा के संबंध में यह मत लेवी, ल्युडर्स आदि विद्वानों का है। इसके बाद पाली का समय आता है। मध्यकालीन आर्य-भाषाओं की तीन अवस्थाएँ हैं—जिनमें पाली, प्राकृत तथा अपभ्रंश हैं। पाली के विषय में विद्वानों की यह धारणा है कि यह मगध की प्राचीन भाषा नहीं है, प्रत्युत इसका संबंध यथार्थ में मध्य-देश की भाषा से है। विद्वान् लोग पाली को पश्चिमी हिंदी की पूर्वजा के रूप में मानते हैं। प्रथम में बुद्ध भगवान् के उपदेश पूर्वीय भाषा में ही थे, बाद में वे पाली भाषा में परिणत किए गए। बुद्ध के समय तथा मौर्य राजाओं के काल में पाटलिपुत्र में इस पूर्वीय भाषा की अधिक उन्नति हुई। इसके बाद पाली भाषा का विकास हुआ, और यह विकास पश्चिमी हिंदी के क्षेत्र में ही हुआ। ईसवीय पाँचवीं शताब्दी तक पाली का वह स्वच्छंद रूप पूर्ववत् नहीं रह गया, इसमें कृत्रिमता आने लगी, और इस पर संस्कृत का प्रभाव बढ़ने लगा। इस समय यह भारतवर्ष, सिंहल, बर्मा तथा श्याम की कृत्रिम साहित्यिक भाषा हो गई। साधारण जनता से इसका संपर्क घटने लगा, अतः इसका हास होना स्वाभाविक था।

सीलोन के श्रीयुत ए० पी० बुद्धदत्त थेरा ने अँगरेजी में पाली का

व्याकरण लिखा है। इस ग्रन्थ का नाम है—'The new Pali Course'। इसकी भूमिका में यह लिखते हैं—

"Pali is the language in which the oldest Buddhist texts were composed. It originated in the ancient country of magadha which was the Kingdom of Emperor Asoka and the centre of Buddhist learning during many centuries. Pali is older than classical Sanskrit .. "

पाली को लौकिक संस्कृत में प्राचीन मानना काट कल्याण-मन्त्र है। इसमें संदेह नहीं कि पाली में कुछ अग वैदिक संस्कृत में साक्षात् रूप से आए हुए पाए जाते हैं, परन्तु इतने में ही इसे लौकिक संस्कृत से भी प्राचीन मानना जोदक्षम नहीं है।

संस्कृत में वर्ण-व्यत्यय के नियम निरुक्त में दिए गए हैं, जैसे वर्णागम, वर्ण-विपर्यय, वर्ण-विकार, वर्ण-नाश आदि। उन्हीं प्रकार आधुनिक भाषा-विज्ञान-वेत्ताओं ने वर्णों के परिवर्तन के मध्य में कुछ नियमों का उल्लेख किया है। मूल ग्रन्थ में उनका पर कुछ उल्लेख हुआ है, अतः उनके सगलतया समझने के लिये कुछ नियमों का यहाँ उल्लेख करना स्वीचीन होगा।

१. परस्पर विनिमय (Metathesis)

जब कई ध्वनियों का मयोग होता है, तो बहुधा उनमें स्थान-विनिमय होते देखे जाते हैं। जिन पदों में मूर् या ल् की भ्रमि रहती है, उनमें यह विशेष रूप में देखा जाता है, जैसे—

स० इक्षु—प्रा० उच्छ्रु—हि० उग्र

सं० विन्दु—हि० वृद्ध

२. अग्रगम या आदिस्वरागम (Prothesis)

बोलते समय आरम्भ में ही कोई ऐसी भ्रमि प्रा जाती है या

संयुक्ताक्षर आ जाता है, जिसके उच्चारण में कठिनता मालूम देती है, तब उस शब्द के पूर्व अनजान में ही कोई स्वर—बहुधा इ—आकर सहायता कर देता है। जैसे—

सस्कृत	पाली
ऋणम्	इण
ऋपि	इसि
श्रृंग	सिग

३. स्वर-भक्ति या मध्यस्वरागम (Anaptyxis)

संयुक्ताक्षरों को बालने में विशेष प्रयत्नशील होना पड़ता है। इस असुविधा को दूर करने के लिये मन अग्ने आप दो संयुक्त व्यंजनों के बीच कोई छाटा-सा स्वर ला रखता है। इस प्रकार दो व्यंजनों के बीच स्वर रख देने को स्वरभक्ति कहते हैं। यह प्रवृत्ति पंजाबी भाषा-भाषी लोगों में बहुतायत से देखने को मिलती है। जैसे—

स्टेशन—सटेशन

स्कूल—सकूल

संस्कृत से प्राकृत में विकास होते समय भी इस तरह के बहुत से उदाहरण देखने को मिलते हैं। जैसे—

सं० रत्न—प्रा० रदन—हि० रतन

सं० कृष्ण—प्रा० कसण

स० स्त्री—पाली तिरया—तिरिया

४. ध्वनि-लोप या अक्षर-लोप (Haplology)

जब दो समान ध्वनिधर्मों या समान अक्षर पास-ही-पास आते हैं, तो प्रयत्न-लाघव के कारण अनजाने ही उनमें से एक का लोप हो जाता है। ध्वनि या अक्षर-लोप दो प्रकार का होता है—(क) स्वर-लोप एव (ख) व्यंजन-लोप ।

(क) स्वर-लोप

स्वर-लोप तीन प्रकार का होता है—

(१) ग्राटि स्वर-लोप (Apocope)

स० अभ्यतर—हि० भीतर

” अरघट्ट—हि० गूट, (गुनगती—गूट)

(२) मन्द-स्वर-लोप (Syncope)

मध्य-स्वर का पूर्ण लोप बहुत कम पाया जाता है, श्रांग प्राय लिम्बित रूप में नहीं पाया जाता है, केवल उमका उच्चरित रूप पाया जाता है ।

(३) अत-स्वर-लोप (Aphesis)

मदृत्त	द्विटी
ऊर्णा	उन
गोघा	गोह
शय्या	मेज
निद्रा	नीद
जिह्वा	जीभ

(ख) व्यजन-लोप

सं०	प्रा०	हिंदी
सुवर्णकार	साणारो	सानार
मपत्नी		मौत
कदली		कला
वलक	पाली वाक	
सकल्पयति	” सकापयति	

५. समीकरण (Assimilation)

जब दो विभिन्न धनियों पाम-पास आ जाती हैं, तो प्रथम-लाघव से दोनो सम हो जाती हैं । यह दो प्रकार से होता है—

(क) पुरोगामी समीकरण (Progressive assimilation)

मस्तिष्क जब एक ध्वनि पर जमा रहता है, और उसी समय आगे आनेवाली ध्वनि का आभास आ गया, तो पिछली ध्वनि ही आगे आनेवाली ध्वनि को अपने समान कर लेती है। इस प्रकार का समीकरण पुरोगामी समीकरण कहलाता है, जैसे—

सं० लग्न	प्रा० लग्ग
॥ अग्नि	पाली अग्गी, अग्गि
॥ नग्न	प्रा० नग्गो
॥ आत्मन्	पाली अत्ता
॥ सप्तं	॥ सहस्सं
॥ कन्या	॥ कब्जा
॥ ईश्वर	॥ इस्सर

(ख) पश्चगामी समीकरण (Regressive assimilation)

जब मस्तिष्क एक ध्वनि पर आधा ही ठहरता है, और उसी समय आगे आगली ध्वनि आ धमकती है, तो आगली ध्वनि पूर्व ध्वनि क सम कर लेती है। इस प्रकार जब परवर्ती ध्वनि के समान पूर्ववर्ती ध्वनि हो जाती है, तो वह पश्चगामी समीकरण कहलाता है, जैसे—

सं० सर्वः	पाली सब्बो
॥ कर्म	॥ कम्म
॥ भक्त	प्रा० भूत्त—हिदी भगत
॥ सर्प	॥ सप्प
॥ धर्म	॥ धम्म
॥ खड्ग	॥ खग्ग
॥ पुद्गल	॥ पुग्गल

६. विपमीकरण (Dissimilation)

कभी-कभी पार्श्ववर्ती नम ध्वनियों के उच्चारण में असुविधा मालूम

पडती है, अतएव प्रयत्न-लाभ के लिये उन्हें भिन्न-रूप दिया जाता है। यही विपरीकरण कहलाता है, जैसे—

१०	पिपासा	हिटी प्यासा
११	पिपीलिका	प्रा० क्विपिल्लिका
१२	मीमांसे	पाली वीममंते
१३	पिपासति	११ विवामति
१४	प्रापनं	११ पाउण हिटी पाना
१५	काक	प्रा० काश्रो ११ काग

पालिसाहित्य

यह प्रायः सर्वसम्मत सिद्धांत है कि भगवान् बुद्ध के प्रवचन मौखिक हूआ करते थे, और उनके निर्वाण के बाद ही मर्घप्रथम उन प्रवचनों का संग्रह प्रारंभ हुआ। अतः पाली धार्मिक ग्रंथों का प्राग-बुद्ध-निर्वाण के बाद ही होता है। इसी प्रकार इनकी अन्तिम मीमांसा ईसवी प्रथम शताब्दी से अव्यवहित पूर्व भिन्न होती है। मल्लिकार्जुन ईसवी प्रथम शतक में लिखा गया था। इसमें प्रायः उन सभी ग्रंथों का उल्लेख है, जो उसमें पूर्व निश्चित ही चुके हैं। अतः ईसा से पूर्व प्रथम शतक का अन्तिम भाग ही इन ग्रंथों का प्रणयन की चरम मीमांसा सिद्ध होती है। श्रावुत विग्ल चरण्णत्ता ने अपने 'पालि-साहित्य' के इतिहास में इसका विगद विवेचन किया है। विशेष विज्ञप्ति के लिये उनका ग्रंथ देखना चाहिए। इनके अनुसार उन्होंने जो समय विभाग किया है, वह इस प्रकार है—प्रथम साल ४८३ में ३८३ ई० पू०; द्वितीय ३८३-२६५ ई० पू०; तृतीय २६५—२३० ई० पू०, चतुर्थ २३०-२०० ई० पू० और पंचम तथा अन्तिम २००-१०० ई० पू०। इस अभ्यन्तर में पाली-ग्रंथों के संशोधन के मध्य में एक महासम्मेलन हुए हैं—तीन भारतवर्ष में तथा तीन स्थानों में। १९००-१९०१ वर्ष में प्रथम सम्मेलन बुद्ध के निर्वाण के बाद ही राजातन्त्र के

राजत्व-काल में हुआ था । द्वितीय सम्मेलन कालाशोक (कालकीर्ण) के राजत्व-काल में तथा तृतीय सम्राट् अशोक के तत्त्वावधान में । अतिम तीन सम्मेलन सिंहल में अशोक-सुत मंहट के सिंहल में बौद्ध-धर्म-प्रचार के लिये जाने के बाद भिन्न-भिन्न समय में हुए । जिनकी अतिम सीमा ईसा से पूर्व की प्रथम शताब्दी है ।

बौद्ध ग्रंथा में तीन पिटक (पिटारे) हैं, और उनके अतर्गत प्रत्येक में भिन्न-भिन्न खंड हैं । प्रथम विनय पिटक है ; द्वितीय सूत्र पिटक है । इसका पंचमखंड जूट्ट निकाय है, जिसके अतर्गत जातक कथाएँ उपलब्ध होती हैं । विनय-पिटक में बौद्ध संप्रदाय में प्रविष्ट भिक्षुओं के व्यवहार सौकर्य के लिये नियम-उपनियमा का विशेष उल्लेख है । द्वितीय सूत्र पिटक के भाग 'निकाय' नाम में अभिहित हैं—१ दीघ निकाय, २ मज्झिम निकाय, ३ सयुत्त निकाय, ४ अंगुत्तर निकाय और ५ खुद्दक निकाय । इनमें भगवान् बुद्ध के प्रवचन संगृहीत हैं । इन्हीं का दार्शनिक विवेचन तृतीय अमिधम्म-पिटक में संगृहीत है । यही पाली के मूल धर्म-ग्रंथ हैं, और ये सब ईसवीय से पूर्व स्थिर हो चुके थे । इसके बाद अनेक टीका-ग्रंथ-विवरण आदि पाली में लिखे गए हैं । बाद में संस्कृत में भी बौद्ध मत पर अनेक ग्रंथ लिखे गए हैं ।

बुद्ध भगवान् के उपदेश किनने मार्मिक होते थे, इनका यथार्थ अनुभव उनके परिशीलन से प्राप्त होता है । दार्शनिक विचारों में यद्यपि सबका ऐक्यत्व नहीं है, तथापि आचार-प्रकरण (शील आदि) में किसी को भी विप्रतिपत्ति नहीं है । दार्शनिक विचारों का खडन-मडन बहुत हुआ है, पर वास्तविक दृष्टि से उनका समन्वय हो जाता है ।

लखनऊ
१५।।।१६५२ }

आद्यादत्त ठाकुर

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ	विषय	पृष्ठ
वर्ण-विभाग—	१	रूपादिगण ...	६८
स्वर वर्ण ...	१	स्वादिगण ...	६९
व्यजन वर्ण ...	२	ऋणादिगण ...	७०
संधि प्रकरण	३	तनादिगण ..	७१
स्वर-संधि ...	३	जुगोत्यादिगण ...	७४
व्यजन-संधि ...	८	चुरादिगण ...	७२
पाली शब्दों के स्वरूप और		लोट लकार ...	८३
उनका संस्कृत से संबंध १०		विधिलिट् ...	७५
स्वर परिवर्तन ...	११	लिट् ...	७६
व्यजन परिवर्तन...	२१	लृट् ...	८०
सुवत प्रक्रिया—	२६	लृट् ...	८४
स्वरात् ...	३०	लृट् ...	८५
व्यजनात् ...	४२	लृट् ...	८८
सर्वनाम ...	४९	लृट् ...	८९
संख्या शब्द ...	५६	लृट् ...	९५
क्रिया-विभाग— ...	६०	गिज्जत प्रक्रिया ...	९५
भ्वादिगण ...	६१	मन्त्रंत् ...	९७
अदादिगण .	६४	यत्त और यत्तुगत	९९
तुदादिगण ...	६६	नान धातु ...	९९
दिवादिगण ...	६७	कर्म और भाववान्त	१००
		अव्यय ...	१०३
		कृदन्त ...	१०६

विषय	पृष्ठ	विषय	पृष्ठ
कृत्य प्रत्ययांत ...	११२	तद्धित-प्रकरण ...	१२०
समास-प्रकरण	११५	स्त्रीप्रत्यय ...	१२२
कारक और विभक्ति	१२०		

पाठावली

धम्मपद से ..	१२४	राजोवादजातक ...	१३३
धम्मपद की टीका		महोसधस्स श्रावाहो	१३६
से उद्धृत ...	१२५	महोसधस्स विनिच्छयो	१४०
बालनक्खत्तघुट्ठवत्थु	१२६	चुल्लकमेट्ठि ...	१४१
निर्वाण ..	१२७	शब्द-कोष ...	१४५
दसरथजातक ...	१२८		

पाली-प्रबोध

वर्ण-विभाग

वैदिक भाषा में ३४ अक्षर माने गए हैं। यह संख्या जनैः-जनेः कम होती गई। वर्तमान संस्कृत में ५० हो गई। पाली तक पहुँचने-पहुँचते वह संख्या और भी क्षीण हो गई।

स्वर—पाली में केवल आठ स्वर पाए जाते हैं। यथा—अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ए और औ।

ऋकार के स्थान में कहीं अ, कहीं इ और कहीं उ होते हैं। उदाहरणार्थ ऋ के स्थान में अ का प्रयोग—गृहं=गृह; नृत्यं=नचं। ऋ के स्थान में इ—ऋणम्=इणं; ऋषिः=ऋषि, शृग=सिग। ऋ के स्थान में उ—ऋतु=उतु; ऋपम=उममं।

लृकार का प्रयोग तो संस्कृत में ही बहुत विरल है। पाली में तो उसका सर्वथा अभाव है।

ऐ और औ भी पाली में नहीं पाए जाते।

ऐ के स्थान में प्रायः ए मिलता है। यथा—ऐरावण=रावणो; वैमानिक=मेमानिक, वैयाकरण=वेय्याकरण।

कहीं-कहीं ऐ के स्थान में इकार तथा ईकार देखे जाते हैं। यथा—अवेयं = गीवेयं; सेधव=सिधवो। औ के स्थान में अक्षिफतर औ देखा जाता है। यथा—

औदरिक=प्रोदरिकः; दौवारिक=दोवारिको।

कहीं-कहीं उ भी देखा जाता है। यथा—मौत्तिर=मुत्तिर; औदित्यं=उदित्यं।

व्यंजन वर्ण

पाली में शकार तथा षकार का प्रयोग नहीं पाया जाता । इनके स्थान में केवल दंत्य सकार देखा जाता है ।

साधारण विशेषताएँ जो पाली में पाई जाती हैं—

(१) पाला में पद के अंत में हल् (व्यंजन) नहीं मिलता । संस्कृत में जो पद हलंत होते हैं, उनके अंत हल् का पाली में लोप हो जाता है । यथा—विद्युत्=विजु ; पश्चात्=पच्छा ; समतात्=समता ; गुणवान्=गुणवा ।

(२) पाणिनीय व्याकरण के अनुसार पद के अंत में स्थित म् के स्थान में अनुस्वार नहीं होता, किंतु सारस्वत व्याकरण के अनुसार होता है ।

पाली में अंत्य म् के स्थान में नित्य अनुस्वार होता है । यथा—चित्तम्=चित्तं ; तीर्थम्=तिर्थं ।

(३) पाली में विसर्ग का प्रयोग नहीं पाया जाता । संस्कृत के अकारांत पद के अंत में जो विसर्ग होता है, उसके स्थान में पाली में ओ होता है; अन्यत्र (अकारांत पद से भिन्न स्थल में) विसर्ग का प्रायः लोप होता है । यथा—

देवः=देवो ; कः=को ; एषः=एसो ; भिक्षुः=भिक्षु , अग्निः=अग्गि ; घेनुः=घेनु ।

नोट—रद के मध्यस्थित विसर्ग के नियम भिन्न हैं । उनका यथा-स्थान उल्लेख होगा ।

(४) पाली में रेफ का प्रयोग नहीं होता । संस्कृत के रेफ का पाली में प्रायः लोप हो जाता है और परवर्ण का प्रायः द्वित्व होता है । यथा—कर्म=कम्म; सर्वः=सब्बो ; निर्जलः=निजलो ।

यदि रेफ हकार के ऊपर हो, तो दोनों के बीच में अकार आ जाता है और कहीं-कहीं इकार आ जाता है—

तर्हि=ररिह; महार्हः=महारहो; गर्हणम्=गर्हणं, वर्त्=वरिहं;
वर्ही=वरिही ।

यदि रेफ यकार पर हो, तो रेफ महित यकार के स्थान में प्रायः
रिय होता है—अथच कहीं-कहीं उसका लोप देखा जाता है ।

निर् उपसर्ग का रेफ यदि इकार पर हो, तो रेफ का लोप होता
है और पूर्वस्थित नि का ह्रस्व इकार दीर्घ हो जाता है—

कार्यम्=ररिय, नय्य; आर्यः=अरियं; अय्यो । पर्यकः=ररि-
र्यको ; कदर्थम्=रुदरिय, मार्य=परिया, मूर्यः=सुगियों; पर्या-
दानं=ररियादान, पर्यायः=परियायो ।

निर्हरणम्=नीहरणः; निर्हतः=नीहतो ।

पद के आदिवर्ण में स्थित रेफ का प्रायः लोप देखा जाता है । यथा—
क्रीतः=क्रीतो ; क्रु व्यति=क्रुब्धति, ग्रहणम्=गहणं . प्रत=पेतो ।

पद के मध्यस्थित वर्ण के साथ यदि रेफ का संयोग हो, तो रेफ
का लोप होता है और जिस वर्ण में रेफ का संयोग होता है, उसे
द्वित्व होता है । यथा—

प्रक्रमः=पक्रमो; समग्रः=समग्रो ।

अपवाद—

पद के मध्य अथवा अंत में एक में अधिक व्यंजन वर्ण के बाद रेफ
आने से उसका केवल लोप होता है, द्वित्व कार्य नहीं होता । यथा—

इद्रः=इदो ; अन्नम्=अन्तं ।

संधि प्रकरण

स्वर संधि

(१) स्वर वर्ण से पर यदि तद्विन्न स्वर वर्ण हो, तो षट्-रटो
पूर्व स्वर का लोप होता है—

यस्स+इन्द्रियाणि=रस्सिन्द्रियाणि ।

अञ्ज+उपोसथो=अञ्जुपोसथो ।

महा + इच्छो = महिच्छो ।

महा + आघो = महोघो ।

मे + अलि = मलि ।

उदधि + ऊमियो = उदधूमियो ।

अग्नि + आहितो = अग्नाहितो ।

मिक्खुनि + ओवादो = मिक्खुनोवादो ।

मनसि + इच्छति = मनसिच्छति ।

एसो + आवुसो = एसावुसो ।

(२) स्वर से पर तद्विन्न स्वर आने से, कमी-कमी पर स्वर का लोप होता है । यथा—

चत्तारो + इमे = चत्तारोमे ।

चक्खु + इन्द्रियाणि = चक्खुद्रियाणि ।

ते + इमे = तेमे ।

ते + अपि = तेपि ।

सञ्जा + इति = सञ्जाति ।

छाया + इव = छायाव ।

अकतंजू + असि = अकतंजूसि । (अकृतशोऽसि)

आकासे + इव = आकासेव ।

वसलो + इति = वसलोति ।

(३) पूर्व स्वर के लोप होने पर कमी-कमी पर स्वर (यदि ह्रस्व हो तो) दीर्घ हो जाता है—

कम्म + उपनिस्सयो = कम्मूपनिस्सयो ।

सद्धा + इध = सद्धेध । (अद्धेह)

अप्पस्सुतो + अयं = अप्पस्सुतायं ।

बुक्खो + अयं = बुक्खायं ।

योपि + अयं = योपायं ।

सचे + अह = सचाह ।

तदा + ऽपमम्मत्ति = तदपमम्मत्ति ।

(४) पर स्वर के लान होने पर कभी-कभी पूर्व स्वर (यदि ह्रस्व हो तो) दीर्घ हो जाता है—

मु + इध = मूध (स्विह)

साधु + ऽति = साधूति ।

लोकस्स + ऽति = लोक्कस्साति ।

देव + ऽति = देवाति ।

वि + अतिमानेति = वीतिमानेति ।

किमु + ऽध्वित्त = कियूध्वित्त ।

वि + अति मारेति = वीतिसारेति ।

विज्जु + इव = विज्जूर ।

निम्न स्थलो में दीर्घकार्य नहीं होता—

इति + अस्म = इतिस्स, यस्स + ऽदानि = यस्सदानि ।

(५) अवर्ण, इवर्ण अथवा उवर्ण में पर सवर्ण स्वर आने में, संस्कृत के सदृश, दोनों मिलकर सवर्ण दीर्घ होता है—

आण + आलोकेन = आणालोकेन ।

देमि + ऽति = देमीति ।

बुद्ध + अनुस्सति = बुद्धानुस्सति ।

सम्मन्ति + इध = सम्मन्तीध ।

बहु + उपकार = बहूकारं ।

(६) अकार अथवा आकार में पर इकार आने में एकार और ः कार आने में ओकार होता है—

अव + इच्च = अवैच्च ।

उप + इतो = उपेतो ।

मुख + उदकं = मुखोदकं ।

चद + उदयं=चंदोदयं ।

(७) इकार मे पर असवर्ण स्वर रहने से इकार के स्थान में प्रायः यकार होता है—

वि + आकतो=व्याकतो ।

अग्नि + आगार=अग्न्यागार ।

अपवाद—

गच्छामि + अहं=गच्छामहं ।

ऐसी ही स्थिति मे इकार के स्थान में कभी-कभी इय् होता है—

अग्नि + आगारे=अग्निगयागारे ।

पंचमो + अत्ये=पंचमित्यथे ।

परि + एप्ना=परियेसना ।

(८) ओकार अथवा उकार से पर असवर्ण स्वर रहने से ओकार और उकार के स्थान में कभी-कभी व होता है—

को + अत्थो=कूत्थो ।

यो + अथ=यूवाय ।

सो + अस्स=सूवास्स । १९५१

यतो + अधिकरणं=यत्वाधिकरणं ।

अथलो + अस्स=अथ ख्वस्स ।

दु + आकारो=दूआकारो ।

वत्थु + एव=वत्थ्वेव ।

सु + आगतं=सूवागतं ।

अनु + एति=अन्वेति ।

नदु + एव=नद्वेव ।

उकार सं पर असवर्ण स्वर रहने से कभी-कभी उकार के स्थान में उव् होता है—

पुथु + आसने=पुथुवासने ।

(६) एकार मे पर स्वर वर्ण (प्रायः अकार) रहने मे कभी-कभी एकार का लोप हो जाता है, और परवर्ती ह्रस्व अकार दीर्घ हो जाता है—

मे+अयं = म्यायं; ते+अहं = त्याह; पञ्चत+अहं=पञ्चत्याहं ।

(१०) दीर्घ स्वर से पर एव होने मे कभी-कभी एव के एकार के स्थान में विकल्प से 'रि' आदेश होता है, और पूर्वस्थित दीर्घ स्वर ह्रस्व हो जाता है—

यथा+एव=यथरिव, यथेव ।

तथा+एव=तथरिव, तथेव ।

कभी-कभी ह्रस्व स्वर से पर इव अथवा एव आने मे उभे रेफ का आगम होता है—

विञ्जु+इव=विञ्जुरिव । सन्धि+एव=सन्धिरेव ।

(११) कभी-कभी केवल उच्चारण सौकर्य के लिये या कभी-कभी छद्म के अनुरोध से व्यजन वर्ण से पूर्व स्थित ह्रस्व स्वर दीर्घ हो जाता है—

सम्म+धम्मो=सम्माधम्मो । (सम्यग्धर्मः)

मुनि+चरे=मुनीचरे ।

खति+परमं=खतीपरमं ।

जायति+सोका=जायतीसोको ।

(१२) साधारणतः इदं शब्द तथा एव शब्द पर में रहने मे उच्चारण सौकर्य के लिये मध्य मे यकार का आगम होता है—

वमा+इदं=मयिदं; न+इदं=नयिद; न+इमानि=नयिमानि ।

नव+इमं=नवयिमे; न+एव=नयेव ।

तेसु+एव=तेसुयेव; सो+एव=सोयेव ।

(१३) कभी-कभी स्वर वर्ण पर में रहने मे पूर्ववर्ती स्वर का अकार का आगम होता है—

लघु+एस्तत्ति=लघुमेस्तत्ति ।

कत्वा+इव=कत्वामिव ।

गिरि+इव=गिरिमिव ।

येन+इध=येनमिव ।

आकामे+अभि-पूजयि=आकामेमभिपूजयि ।

(१४) कमी-कमी इमी तरह दो स्वरां के बीच में उच्चारण सौकर्य के लिये नकार का आगम होता है—

चिर+आयति=चिगंनायति ।

इता+आयति=इतोनायति ।

अविज्जा+अहोसि=अविज्जा नाहोसि ।

(१५) कमी-कमी ऐसे ही स्थलों में दकार का आगम होता है—
सम्मा+अत्थो=सम्मदत्थो ।

(१६) वृत्त के अनुरोध में तथा उच्चारण-सुविधा के लिये कमी-कमी पूर्ववर्ती अनुस्वार का लोप होता है—

एवं+अह=एवाहं ; कथं+अह=कथाहं ।

बुढान+मासनं=बुढानसासनं ।

(१७) कमी-कमी अनुस्वार से पर स्थित स्वर का लोप होता है—
अमिनंदुं+इति=अमिनदुंति ।

कत+इति=कतति । (कृतमिति)

किं+इति=किति ।

वीजं+इव=वीजंव ।

इदं+अपि=इदंपि ।

दातुं+अपि=दातुंपि ।

किं+इदानि+किंढानि ।

विकल्प से किमिति आदि प्रयोग भी उपलब्ध होते हैं ।

व्यंजन संधि

स्वरात् पद से पर हलादि पद आने से भी कमी-कमी छंद के अनुरोध से पूर्वस्थित स्वर में विकार होता है—

(१) कभी कभी व्यजनादि पद न पूर्व स्थित दीर्घ मय् रम्य हो जाना है । यथा—

यथा + भात्री + गुणेन = यथाभाविगुणेन ।

यिष्ट वा हुत वा लोने + यिष्टं च हुत व लोने (ऽष्ट वा दृत वा लोने)

(२) कभी-कभी पूर्वस्थित ह्रस्व मय् दीर्घ हो जाना है—

एवं गामे मुनि चर = एव गामं मुनो चर ।

सु + रक्खं = पूरक्ख ।

(३) स्वरात् पद अथवा निपात में परवर्ती व्यंजन को कभी-कभी द्वित्व होता है—

इध + पमादो = इधपमादो ।

सु + पद्धितो = सुप्पद्धितो ।

वि + पयुत्तो = विपयुत्तो ।

अ + पतिवत्तियो = अप्पतिवत्तियो ।

प + कपो = पक्कपो ।

यथा + कम् = यथक्कम् ।

वि + जोतति = विजोतति ।

कत + जु = कत्तजु ।

दु + लभो = दुल्लभो ।

दु + पीलो = दुप्पीलो ।

नोट—इन उदाहरणों में प्रकृत होगा कि पूर्व में, मन्वृत में, लो सयुक्त अक्षर धं, पाली में आकर जनमे में एक (प्रायः णे) का लोप हो गया था । उपसर्गादि के वश में उनमें द्वित्व होकर उनका परिमाण फिर पूर्ववत् हो गया ।

यथा इध पमादो में प्रमाद (म०) के स्थान में पमाद हुआ था । अब इध के सपर्क से पकार को द्वित्व होने में रोक का क्षति की पूर्ति हो गई । इसी प्रकार अन्य पदों को समझना चाहिए ।

उ, उप, परि, नि, वु इत्यादि उपसर्गों से पर व्यंजन को प्रायः द्वित्व होता है ।

द्वित्व प्रकरण में वकार के स्थान में बकार होता है, तथा महाप्राण (वर्ग के द्वितीय तथा चतुर्थ) अक्षरों के स्थान में उनके अल्पप्राण (प्रथम तथा तृतीय) अक्षर होते हैं—

नि + वानं = निब्वान । नि + वायति = निब्वायति ।

वु + विनिच्छयो = वुब्विनिच्छयो ।

पाली शब्दों के स्वरूप और उनका संस्कृत से संबंध

पाली भाषा संस्कृत से ही निकली है, अथवा उससे स्वतंत्र है, इस विषय में विद्वज्जनों में मतभेद है । प्राचीन पण्डितों के पोषक पंडितप्रवर पाली की जननी संस्कृत को ही मानते हैं । इनके मत में जिस प्रकार अन्य प्राकृत संस्कृत से निकलीं, उसी तरह पाली भी प्राकृत के एक भेद में से है, और वह सर्वथा संस्कृत से ही प्रसूत है । इसके विपरीत कुछ आधुनिक पंडितों की यह धारणा है कि संस्कृत और पाली सर्वथा स्वतंत्र हैं, उनमें जनक जन्य संबंध नहीं है । दोनों पृथक् पृथक् हैं । वे दोनों ही किसी एक साधारण स्रोत से भले ही प्रावृत्त हों, और इस तरह एक दूसरे की बहनें चाहे हो सकती हैं, पर जननी और जन्या का संबंध कदापि स्वीकृत नहीं हो सकता । इन दोनों मतों में से कौन कितने महत्त्व का है, इसके विवेचन का यह स्थल नहीं । जो लोग पाली को संस्कृत से निकली हुई मानते हैं, उनका संस्कृत और पाली के रूपों में भेद प्रदर्शन करना, अथवा उसका साधारण नियमों का उल्लेख करना उचित ही है, परंतु जो लोग पाली और संस्कृत को सर्वथा भिन्न मानते हैं, उन्होंने भी—ज्ञानतः

अथवा अज्ञाननः, तुलनात्मक भाषा-विज्ञान की दृष्टि में ही ग्रथवा और किमी कारण से—मस्कृत को ही मूल मानकर पाली रूपों में विकार होने के नियमों का उल्लेख किया है। प्रायः सभी पाली व्याकरणों ने संस्कृत में पाली में परिवर्तन होने के ही नियमों का उल्लेख किया है। चाहे उनके मत में मस्कृत में पाली प्रादुर्भूत हो या न हो। यहाँ भी उसी सिद्धांत के अनुसार विवादग्रस्त विषय की विवेचना किए बिना ही, मस्कृत को मूल मानकर पाली और संस्कृत में क्या-क्या अंतर हैं, उनका माधारणतः उल्लेख किया जाता है। यहाँ यह लिख देना भी अत्यंत आवश्यक है कि मस्कृत में पाली में परिवर्तन होने के जो नियम दिए गए हैं, वे मार्वात्रिक कदापि नहीं हैं—शायिक हैं और उनके अपवाद रूप अनेक उदाहरण मिलते हैं; केवल सामान्य नियमों का यहाँ उल्लेख है, विवादग्रस्त नियम छोड़ दिए गए हैं।

(१) संस्कृत के ह्रस्व अक्षर के स्थान में भिन्न-भिन्न स्थानों में भिन्न-भिन्न प्रकार के परिवर्तन देखे जाते हैं। यथा—

(अ) कभी कभी अक्षर के स्थान में ए होता है। यह परवर्ती संयुक्त अक्षर के कारण होता है, यह ध्यान देने योग्य है। यथा —

एत्थ—अत्र ।

उभयेत्थ—उभयत्र ।

हेट्ठा—अधस्तात् ।

(आ) कभी-कभी अ के स्थान में इ देखा जाता है। यथा—

तिपु—त्रपु—(सीमा)

कलिभक—कदंब ।

पिलाल—पलाल । (धान का पत्ता)

तिमिस—तमस्—अधकार ।

तिमस्ता—तमस्ता ।

(ह) कभी-कभी अ के स्थान में उ होता है, यह विशेष करके उस स्थल में देखा जाता है, जहाँ उससे पूर्व- अथवा पर में (कभी-कभी कुछ दूर भी) पवर्ग का कोई अक्षर रहता है ।

सम्मुञ्जनी, सम्मुञ्जनी—सम्भार्जनी—भाङ् ।

निव्वुसितत्ता—निरवसितात्ता ।

निमुञ्जति—निमज्जति ।

पुथुञ्जन—पृथग्जन—साधारण श्रेणी का जन ।

पय्याणीसति—पच्चविंशति ।

पवर्ग का प्रभाव जहाँ नहीं रहता है, ऐसे स्थल भी मिलते हैं, यथा—थुनंति—त्तनंति ।

अञ्जुक—अजक ।

आगु—आगस् । (अपराध)

पञ्जण—पज्जन्य । (मेघ)

सञ्जु—सद्यः ।

उसूया—असूया ।

(ई) कहीं-कहीं अ के स्थान में ओ भी मिलता है—

समोस—संमर्श ।

अतो—अतर ।

तिरोक्ख—तिरस्क ।

(२) सस्कृत के इकार के स्थान में—

(अ) कभी-कभी अ होता है—

काकशिका—काकिशिका—कौड़ी ।

पठवी—पृथिवी ।

पोक्खरणी—पुष्करिणी ।

घरणी—गृहिणी ।

(आ) कभी-कभी ए होता है—

एत्त—इयत् । (इतना)

विहेसा—विहिंसा ।

वेहागमन—विहायांगमन । (विहायम = आकाश)

वेमतिक—विमतिक ।

वेमज्झ—विमध्य ।

मजेट्ठा—मंजिष्ठा (मजीठ)

माता पेत्तिभर—मातापितृभरः ।

एट्ठि—इष्टि । (यज्ञ अथवा इच्छा)

(इ) कमी-कमी उ होता है—

कुक्कु—किक्कु—एक प्रकार की नाप लंबाई की ।

निच्छुभियति—निच्छुभति—निच्छुभति—नि. लीवति ।

राजुल—राजिल ।

गेरुक्क—गैरिक ।

(३) ईंकार के स्थान में—

(अ) अकार—भस्म—भीष्म । (भयकर)

(आ) आकार—तिरच्छान—तिरश्चीन ।

(इ) एकार—एरेति—ईयति ।

(ई) उकार—ठुम-ठीव ।

निट्टु हति, निट्टु भति—निष्टोवति ।

(४) उकार के स्थान में—

(अ) अकार—सरललि—शङ्कुलि ।

अगरु , अगलु—अगुरु ।

बुद्धभि—बु दुभि ।

चांकरा, वाकर—वागुरा । (जाल)

फल्लति—फुल्लति ।

फरित—स्फुरति ।

(आ) इ—मुदिता—मृदुता ।

सिन्धी—शुक्ति ।

(इ) कमी-कमो विशेष करके संयुक्त अक्षर में पूर्व—ओकार होता है । यथा—

ओक्का—उल्का ।

पामोक्ख—प्रमुख्य ।

कहीं-कहीं संयुक्त अक्षर पर में न रहने पर भी ओकार होता है—
कोलज—कुंलज ।

अनोपम—अनुपम ।

(ए) एकार के स्थान में—

(अ) अकार—

मिलक्ख—म्लेच्छ ।

(आ) आ—कायूर—केयूर ।

(इ) संयुक्त अक्षर में पूर्व—इकार देखा जाता है ।

पसिब्बक—प्रसेवक । (थैली)

पटिविस्सक—प्रतिवेशक । (पडोसी)

उब्बिल्ल—उद्वेल ।

(ई) कहीं-कहीं आकार भी देखा जाता है ।

मकतो—मत्कृते ।

अतिप्पगे—अतिप्रगे—(अत्यंत सवरे)

(ए) संस्कृत के ओकार के स्थान में संयुक्त अक्षर से पूर्व ह्रस्व उकार और असंयुक्त से पूर्व दीर्घ उकार होता है । यथा—

जुयहा—ज्योत्स्ना (चोंदनी) ।

तुत्त—तोत्र (अंकुश) ।

विसूक—विशोक ।

दूम—द्रोह ।

खज्जूपनक—खद्योतनक । (जुगन्कीटा)

आरुग्य (आरोग्य) यहाँ मयुक्त में पूर्व भी दीर्घ उकार है ।

मयुक्त अक्षर में पूर्व यदि दीर्घ स्वर हो, तो यह प्रायः ह्रस्व हो जाता है, इसमें सिद्धात यह माना जाता है कि ह्रस्व के बाद मयुक्त अक्षर आने से सयोगे 'गुरु' के मिद्धात के अनुसार 'गुरु' बद्ध रहना ही है । तब यथार्थ में, ह्रस्व हो जाने पर भी, उसके परिमाण में कोई अंतर नहीं पड़ता । प्रत्युत ह्रस्व होने में उच्चारण में कुछ मोड़वटा जाता है । किंतु पुरानी लिखित पुस्तकों में यह नियम सर्वत्र नहीं देखा जाता । कहीं तो दीर्घ के स्थान में दीर्घ ही लिखा गया है, वहीं ह्रस्व कर दिया गया है । इसके ठीक विपरीत कहीं-कहीं मयुक्त में पूर्व दीर्घ स्वर को ह्रस्व न करके मयुक्त अक्षर में न ही एक वा लोप कर दिया जाता है । दोनों के उच्चारण नीचे दिए जाते हैं—

अजव—आर्जवम् । कोई-कोई आजव लिखते हैं ।

दब्धी—दावीं ।

कुछ लोगों का मत है कि दीर्घ स्वर बड़ा रखना चाहिए, जहाँ संधि होकर दीर्घ स्वर आया हो । अन्य स्थलों में दीर्घ को ह्रस्व कर देना चाहिए । यथा—नाग्यति—न+आग्यति=नाग्यति यहाँ दो अक्षर की संधि के कारण दीर्घ हुआ है, उसमें ह्रस्व नहीं होना चाहिए । इसी प्रकार—पियाग्यि में ह्रस्व न होना चाहिए । क्योंकि यह भी संधिजन्य दीर्घ है । यथा—पिय+अग्यि=पियाग्यि ।

वर्ग के पंचम अक्षर के साथ मयोग रहने पर उसमें पूर्ववर्ती दीर्घ के स्थान में प्रायः ह्रस्व हो जाता है । यथा—

सत—शात । दत्त—दात । दत्त—वात । परंतु इसमें भी नहीं-नहीं व्यक्तिगत मिलता है । यथा—ज्ञान रिच (लागतृत्) यहाँ ल में ह्रस्व अक्षर होना चाहिए था ।

दूसरे प्रकार के संयुक्त अक्षरों में यह नियम अत्यंत शिथिल है ।
कहीं दीर्घ मिलता है । यथा—अतिवाक्य—

कहीं-कहीं ह्रस्व मिलता है । यथा—सकथ, सकृ सक्रिय = शाक्य ।
दुस्मील्य (दौःशील्य) ; जल्वा (जाल्वा) ; मित्वा (भीत्वा) । कहीं-
कहीं दोनो मिलते हैं—आख्यात, अक्खात, पहत्वान, पहात्वान—
(प्रहाय) बल्य, बाल्य; कम्यता—काम्यता; बाह्य—बाह्य ।

संयुक्त अक्षर के साथ दीर्घ स्वर की अक्षर को दूर करने के
लिये जहाँ संयुक्त अक्षर में से एक का लोप हो जाता है, उसके
उदाहरण ये हैं—

आजव—आजँव ।

ऊमि—ऊर्मि । कहीं-कहीं उम्मि भी मिलता है ।

भाणक—भांडक ।

भूज—भूजँ ।

अहासि—अहापीत् ।

इसो प्रकार कहीं-कहीं ह्रस्व से पर संयुक्त अक्षर रहने पर संयुक्त
अक्षर में से एक का लोप हो जाता है, और पूर्व स्थित ह्रस्व दीर्घ हो
जाता है । यथा—

सजीव—सजीव (सद्+जीव) ।

वृषकासति—व्युषकर्षति ।

स्वातन—श्वस्तन । (आगामिदिन होनेवाला)

वाक—वलक ।

संक्रापयति—संक्लयति ।

उत् उपसर्ग के द् का प्रायः लोप होकर उकार दीर्घ हो जाता है ।

यथा .. ऊहसन+उत्—हसन ।

ऊहजजइ—उद्धन्यते ।

ऊहत+उद्धत ।

इस नियम में ठीक विपरीत यह भी देखा जाता है कि ऋ-ऋं-ऋँ-संयुक्त अक्षर से पूर्ववर्ती दीर्घ स्वर ह्रस्व हो जाता है। ऋभी-ऋभीं तां संयुक्त अक्षर पर में न रहने पर भी दीर्घ स्वर ह्रस्व हो जाता है।

वहुन्न—वहूनाम् । पितुन्न—पितृणाम् ।

तिरण्ण । पंचन्न । भुम्मि—भूमि ।

मत्तिसंभव—मातृसभव ।

मातुमत्तिक—मातृमातृक ।

उण्हस्स—उष्णीष ।

निड्ढ—नीड ।

सुत्त—स्यूत ।

जान्नु—जानु ।

एकार और ओकार जब मयुक्त अक्षर में पूर्व आते हैं, तब उनका उच्चारण ह्रस्व के समान होता है। यथा म्य्या ।

एकार के बाद यकार को द्वित्व होता है और एकार का उच्चारण ह्रस्व हो जाता है—सेय्यो—श्रेयः । मच्चुधेय—मृन्युधेय । केयूर में द्वित्व नहीं होता। यहाँ एकार के स्थान में आकार हो जाता है।

यथा—कायूर—केयूर ।

इसी प्रकार ओकार से परे वकार को द्वित्व होता है और ओकार का उच्चारण ह्रस्व होता है—योव्वन—वीवन । अव्वोच्छन्न—अव्यवच्छिन्न । ओम्मिलत्त—अवक्षिप्त ।

आकारात् धातु—जा, दा, स्था प्रभृति स जो न्य रन्त हैं, उनमें इन धातुओं का आकार ह्रस्व हो जाता है—

पज्जवा—प्रजावत् ।

पट्ठयेति—प्रस्थापयति ।

संखत—सख्यात ('संस्कृत' में भी संखत होता है) । धातु के मध्य में स्थित आकार भी प्रायः ह्रस्व हो जाता है—

गहति, गहेति—गाहते ।

उपसर्गस्थ ह्रस्व स्वर प्रायः दीर्घ हो जाता है । यथा—

पाटिमोग—प्रतिमोग ।

पावचन—प्रवचन ;

पाकट—प्रकट ।

पाहेति—प्रहियोति ।

परंतु कहीं उपसर्ग से अतिरिक्त स्थलों में भी अकार के स्थान में दीर्घ आकार देखा जाता है—

आलिंद—अलिंद (आगन) ।

आजिर—अजिर ।

पायस—पायस (खीर) ।

गाव्यूत—गव्यूति ।

उम्मार—उवुंवर, द्वारदेश ।

फलाफल—फलफल ।

खण्डाखण्डं—खण्डखण्डम् ।

जैसा कि पहले लिखा गया है म् के स्थान में, पदात में, अनुस्वार होता है । परंतु पद के मध्य में अनुस्वार भी होता है और विकल्प से परस्थित वर्ण का पंचम वर्ण उसके स्थान में होता है । कुङ्कुम और कुंकुम ; सङ्क्रान्ति और संक्राति ; मण्डास और संडास आदि दोनो ही प्रकार के प्रयोग पाए जाते हैं ।

जकार से पूर्व या तो अनुस्वार ही बना रहता है, अथवा अनुस्वार और जकार, दोनो ही के स्थान में उज हो जाता है । यथा—सयोग अथवा सञ्जोग ।

हकार का संयोग जब वर्ग के पंचम अक्षर से होता है, तब प्रायः दोनो में स्थानविनिमय हो जाता है । चिन्ह—सं० चिह्न ; पुब्बन्ह—सं० पूर्वाह्न ; मञ्भन्ह—सं० मव्याह्न ।

कभी-कभी अनुस्वार सहित ह्रस्व स्वर में अनुस्वार का लोप हो जाता है और ह्रस्व स्वर का दीर्घ हो जाता है—

सीह—निह, बीमनि—विंशति; सगडास—मंदश; दाठा—दटा। यह नियम सम् उपसर्ग में अधिकतर देखा जाता है, विशेष करके जब उसके बाद रेफ आता है। यथा—मागग—माग, मारंभ—संरंभ, सारमी—सरमी।

इसमें ठीक विपरीत, कभी-कभी दीर्घ स्वर के स्थान में ह्रस्व होता है और परिमाण पूरा करने के लिये ह्रस्व में अनुस्वार हो जाता है। यथा—नग—नाग (सर्प)।

मनंतन—सनातन; पिज—पिच्छ (पृच्छ)।

सम्मुञ्जनी—सम्मार्जनी (भाङ्ग); संवरी—शर्वरी। इन दोनों उदाहरणों में रेफ का लोप भी हुआ है।

कभी-कभी ह्रस्व स्वर में भी अनुस्वार आ जाता है। यथा—

महिंस—महिप; दगढ—दढ।

मङ्कतो—मङ्कत (मेरे लिये)।

मङ्कुल—मङ्कुण (खटमल)।

अंच—अर्च (पूजा करना)।

सिगाल—शृगाल।

कभी-कभी पद के अंत में अनुस्वार अथवा नकार जोड़ दिया जाता है—

सकञ्च—सकृत्य।

कुदाचनं—कदानन।

अञ्जदत्तुं—अन्यदस्तु !

तत्तच—तत्त च।

नकार का उदाहरण—चिन्नायति।

कभी-कभी ममास के पूर्व अवयव में अनुस्वार आगम हो जाता है—

१. अतलम्फस्म—अतलस्पर्श ।

सन्धःजह—सर्वजह ।

अन्धन्तम—अन्धतमस् ।

कमी-कमी पद-मध्यस्थित स्वर का लोप हो जाता है । यथा—

अग्न—स० अगार । यहाँ रेफ के स्थान में ग हुआ है और बीचवाले आकार का लोप हुआ है । धीता—स० वुहिता । यहाँ द के उकार का लोप हुआ है और द और ह मिलकर घ हो गया है, फिर इकार दीर्घ हो गया है । पुरानी हिंदी में भा पुत्री के लिये धिया शब्द मिश्रता है ।

पद के आदि में कमी-कमी स्वर लुप्त हो जाता है । यथा—

लङ्कार—स० अलङ्कार; नुमति—सं० अनुमति ।

परञ्जति—अपराध्यति ।

पवन—उपवन ।

संस्कृत में भी अव और अपि के अकार का लोप, मागुरि आचार्य के मत से, माना गया है । उसी का यह और अधिकता से विकास ज्ञात होता है । इति का मी प्रायः ति रह जाता है । इव का व रह जाता है । इमका उल्लेख सधि-प्रकरण में है । पद के आदि में स्वर जोड़ने का उदाहरण है—इत्थी (छीः) । ऐसे उदाहरणों की कमी नहीं है । उच्चारण में सौकर्य होना ही इमका मुख्य हेतु है ।

कहीं-कहीं पद के बीच में भी स्वर आ जाते हैं ।

किलेस—स० क्लेश ।

आचारिय—आचार्य ।

हियो या हिय्यो—ह्यः ।

अरहति—अर्हति ।

हरद—हृद ।

सिरी—श्रीः ।

हिरी—ही ।

पिलवति—लवति ।

व्यञ्जन परिवर्तन

Guttural—संस्कृत के कवर्ग के स्थान में, पाली में पश्चिर्तन होने पर, प्रायः चवर्ग होता है । यथा—

चुण्ड—कुण्ड ।

palatals—संस्कृत के चवर्ग के स्थान के पाली में कवर्ग होता है । यथा—भिसक्क—स० भिपज ।

मिलवख—ग्लेच्छ ।

पभंगून—प्रभञ्जन (वायु) ।

कभी-कभी अक्षरों में परस्पर परिवर्तन होते देखे गए हैं । यथा—

(१) घ के स्थान में ह—रहिरो—स० रुविर ।

(२) त के स्थान में द—मुगदो—स० मुगतः ।

ग

(३) त के स्थान में ट—पहटो—स० प्रहत ।

(४) ग के स्थान में क ।

(५) र के स्थान में ल—पलिपत्तो—परिपल ।

(६) य के स्थान में ज—गवजो—स० गवय ।

(७) ज के स्थान में य—नियम्पुत्त—सं० निजम्पुत्त ।

(८) त के स्थान में क—निरको—नियत ।

Assimilation—Progressive and Regressive.

कभी-कभी जब दा ध्वंजनो का मयोग गता है, पूर्व अक्षर को पर रूप हो जाता है, अथात् पूर्व अक्षर अपने पर अक्षर में परिवर्तित हो जाता है । पाली में इस प्रकार पर रूपराला प्रयोग प्रचुरता से पाया जाता है ।

(१) जब किसी स्पर्श वर्ण का (क से लेकर म पर्यंत वर्ण स्पर्श कहलाते हैं), तो पूर्व वर्ण को पर रूप होता है—

सक् + त् = सत्त ।

सक् + टि = सत्थि ।

तप् + त = तत्त ।

उद् + कम्पेत्ति = उक्कम्पेति ।

तद् + करो = तक्करो ।

उद् + गच्छति = उग्गच्छति ।

भुब् + त् = भुत्त ।

मुच् + त = मुत्त ।

उद् + चिनति = उच्चिनति ।

उद् + छेदी = उच्छेदी ।

उद् + जल = उज्जल ।

उद् + भायति = उब्भायति ।

नोट—यहाँ यह ध्यान देने योग्य है कि ये परिवर्तन प्रायः संस्कृत की संधि के अनुसार ही हुए हैं ।

उद् + गण्हाति = उग्गण्हाति ।

उद् + खिपति = उक्खिपति ।

उद् + छिन्दति = उच्छिन्दति ।

उद् + तियण = उत्तियण ।

उद् + लोकेति = उल्लोकेति ।

तद् + पुरिस = तप्पुरिस ।

(२) कहीं-कहीं दो व्यंजनों के योग होने पर परव्यंजन को पूर्व रूप होता है, अर्थात् पर व्यंजन के स्थान में पूर्व वर्ण हो जाता है—

पाप् + नोति = पापोति ।

कुट् + त = कुट् ।

रुध + त = रुद्ध ।

लभ + त = लब्ध ।

नोट—यहाँ भी सधि होने में रुद्ध, लब्ध आदि रूप होते हैं ।

(२) कभी-कभी तालव्य अक्षर के बाद दंत्य अक्षर के प्रथम चार वर्णों में से कोई आता है, तो दोनों वर्ण मध्वन्य वर्ण में परिवर्तित हो जाते हैं । यथा—

मज् + त = मट् या मट् ।

पुच्छ् + त = पुट् ।

इच्छ् + त = इट् ।

पद के अंत में म के स्थान में न हो जाता है, यदि उसके बाद तकार हा तो । यथा—

गम् + त्वा = गन्त्वा ।

पद के आदि में म रहने में उसमें पूर्ववर्ती दंत्य अक्षर के स्थान में भी म हो जाता है—

उद् + मग्ग = उम्मग्ग ।

य

य के स्थान में प्रायः उसका पूर्ववर्ती अक्षर हो जाता है । बिजोर करके कर्मवाच्य क्रिया के यकार के स्थान में यह पूर्व रूप अधिकतर देखा जाता है—

गम् + य = गम्म ।

पच् + य = पच्च ।

मज् + य = मज्ज ।

भण् + य = भण्ण ।

दिच् + य = दिच्च ।

खाद्+य=खज (द के स्थान में ज होता है) ।

खन्+य=खञ्ज ।

समास के अंतर्गत य (जो संधि होकर इ के स्थान में होता है) पूर्ववर्ती अक्षर में परिणत हो जाता है । यथा—

पल्लङ्को—पल्यङ्क (पल्लि+अङ्क) ।

विपल्लासो—विपर्यासः ।

अप्येकञ्च—अप्येकत्र ।

अबभुगन्ञ्चति—अभ्युदगन्ञ्चति ।

त्य के स्थान च होता है । त्य के अंत का स्वर अत्रिकृत रहता है—

अचचन्त—अत्यन्तम् ।

पच्चयो—प्रत्ययः ।

पच्चेति—प्रत्येति (विश्वास करता है) ।

इच्चस्स—इत्यस्य ।

इच्चादि—इत्यादि ।

जच्चन्धो—जात्यन्धः ।

सच्च—सत्य ।

व्य के स्थान में ङ्ग हाता है—

अङ्गगमो—अध्यगमः ।

अङ्गागाहित्वा—अध्यवगाह्य ।

नोट—यहाँ पाली में अघि उपसर्ग रहने पर भी कृत्रा के स्थान में ल्यप् नहीं हुआ है । यह विषय ल्यप् के प्रकरण में देखना चाहिए ।

अङ्गुगगो—अध्युपगतः ।

अङ्गेति—अव्येति ।

द्य के स्थान में ञ्ज होता है—

नञ्जा—नद्या ।

यञ्जेवं—यद्येवम् ।

मञ्ज—मद्य ।

ध्य के स्थान में च्छ होता है—

तच्छ—तध्य ।

रच्छा—रथ्या ।

व्य के स्थान में व्ज होता है । (पठ के मन्थ में ही)—

दिव्य—दिव्य ।

पद के आदि में व्य रहने से वकार के स्थान में तो वकार हो जाता है, परंतु यकार में परिवर्तन नहीं होता—

व्याकरणं—व्याकरणम् ।

व्यञ्जनं—व्यञ्जनम् ।

स के बाद यकार आने में य के स्थान में म हो जाता है ।

पस्स—पश्य । यहाँ पहले तालव्य के स्थान में दंत्य मन्थ हो जाता है ।

पाली में हकार और यकार के स्थान-परिवर्तन का उदाहरण बहुत अधिकता से मिलता है । जहाँ-जहाँ छ होता है, वहाँ वहाँ च्छ हो जाता है अर्थात् हकार से परवर्ती यकार उमने पूर्व प्रा जाता है—

मग्ह—सह्य ।

गुग्ह—गुह्य ।

पद के आदि में स्थित य अपने पूर्ववर्ती दंत्य मन्थ को भी यकार में परिणत कर देता है—

उद्+युञ्जति=उय्युञ्जति ।

उद्+याति=उय्याति ।

उद्+यान=उय्यान ।

र

पद के अंत में स्थित र प्रायः अने परवर्ती यकार में परिवर्तित हो जाता है—

कर् + तब्ब = कृत्तब्ब ।

कर् + ता = कृत्ता ।

कर् + य = कृत्य ।

धर् + म = धम्म ।

अधिकतर रेफ का लोप भी देखा जाता है—

मर् + न = मत ।

कर् + त = कृत ।

कभी-कभी रेफ के लोप होने पर उसका पूर्ववर्ती स्वर दीर्घ हो जाता है । यथा—

कर् + तब्ब = कातब्ब ।

कर् + तं = कातं ।

नोट—संस्कृत में रेफ का रेफ के परे लोप होता है और तब पूर्ववर्ती ह्रस्व स्वर दीर्घ हो जाता है । यथा—पुनर् + रमते = पुनारमते ।

रेफ के बाद नकार आने से नकार को शत्व हो जाता है और फिर रेफ भी शत्व में परिणत हो जाता है ।

चर् + न = चिण्ण । अकार के स्थान में इकार संस्कृत में भी होता है और चीर्ण रूप बनता है ।

रेफ और लकार के संयोग होने से रेफ लकार में परिणत हो जाता है—

वुर् + लभो = वुल्लभो ।

स

प्स के स्थान में च्छ होता है—

जिगुप् + पा = जिगुच्छा ।

त्स के स्थान में भी च्छ होता है—

तिक्त् + पा = तिक्च्छा ।

कमी-कमी स के बाद त आने में त के स्थान में र होना है और स भी ट में परिणत हो जाता है—

कम्+त=कट् ।

किलिम्+त्=किलिट् ।

डम्+त्=डट् ।

नोट—यहाँ प्रत्यक्ष ही संस्कृत का प्रग प्रभाव पड़ा है । संस्कृत में कट्, क्लिट्, टट् आदि मूर्धन्य के कारण होते हैं । पाली में मूर्धन्य प के स्थान में टत्य स हो गया है, तो भी यह अना अना नती छोड़ बैठा है । और फलतः अपने परवर्ती टत्य अक्षर पर घट प्रभाव डाल ही देता है ।

पद के आदि में स्थित सकार कमी-कमी अपने पूर्ववती टंग अक्षर को भी सकार में बदल देता है—

उद्+साह=उत्साह ।

उत्+पुक=उत्पुक ।

अधिकतर स और त मिलकर त्त होता है—

भम्+त्=भत्त ।

कमी-कमी स और त मिलकर त्थ होता है—

वम्+त्=वत्थ ।

ह

पद में पर पदादि हकार के स्थान में पूर्ववती वर्ग या द्वितीय अथवा चतुर्थ अक्षर होता है । वर्ग के प्रथम अक्षर के बाद हकार आने से उसके स्थान में द्वितीय और तृतीय के बाद स्थान में चतुर्थ अक्षर होता है । उदाहरण—

उद्+हर्त्ति=उद्धर्त्ति ।

उद्+हरण=उद्धरण ।

उद्+हत्त=उद्धत्त ।

नोट—संस्कृत में भी यही रूप होते हैं और उममें इतनी अड़चन नहीं पड़ती, वहाँ तो साधारण सधि के नियम में ही काम चल जाता है। यहाँ भी सधि का ही यथार्थ में यह विषय है।

अनुनामिक (मकार, नकार आदि) तथा यकार और वकार के साथ हकार का संयोग होने से प्रायः स्थान परिवर्तन हो जाता है।
यथा—

गह्+ण=गणह ।

मह्+य=मयह ।

जिह्+वा=जिब्हा ।

कभी-कभी ह और य के संयोग होने पर ह के स्थान में य हो जाता है ।

लेह्+य=लेय्य ।

कभी-कभी—विशेष करके हन् धातु में—हकार के स्थान में घ हो जाता है । यथा—

हनति—अथवा धनेति ।

घञ्—(हन्+य) ।

घम्मति—हम्मति ।

नोट—संस्कृत में भी हन् धातु के ह के स्थान में विशेष अवसर पर घ होता है—यथा घातयति, घात आदि ।

पदात्त ह और त के स्थान में कभी-कभी ढ और कभी-कभी ढ देखा जाता है । यथा—

वुह्+त=वुद्ध (संस्कृत में वुग्घ होता है) ।

लिह्+तुं=लेढुं ।

कभी-कभी इस ढ के स्थान में ल भी होता है ।

लेलुं; मुह्+त=मूढ=मूल ।

रुह्+त=रूढ=रूत ।

हकार और यकार के स्थानपरिवर्तन के मय में उत्प्लेख ही चुका है, उसके अतिरिक्त भी अनेक स्थला में पाली में, हम पराग के उदाहरण मिलते हैं, जहाँ मङ्कत क जन्दा म अन्नग वा परस्पर स्थान-विनिमय देखा जाता है। कुछ उदाहरण ये हैं—

पर्यदाहासे क स्थान में परिकदाहामि ।

आगिय के स्थान में आयिग ।

करिद—रयिर ।

मसक—मरुस ।

रस्मि—रंसि ।

कभी-कभी उच्चारण सौकर्य के लिये अथवा वृत्त के अनुगोप में पदखंड का ही लोप होता देखा जाता है। यथा—

छडगुल—छगुल । हिंदी में छंगा जन्ड आता है ।

दमसहस्सी—दसहस्सी ।

जम्बुदीपं अवेकखन्तो अद्म = जम्बुदीपं अवेकखन्तो अद् ।

अभिञ्जाय सच्चिरत्तः—अभिञ्जा माच्चक्त्वा ।

सुवत प्रक्रिया

जैसा कि प्रथम पृष्ठ में लिखा गया है, पाली में संस्कृत की अपेक्षा वर्ण कम हैं। वचन और विभक्ति के विषय में पाली में भी हम ही दृष्टि-गोचर होता है। आधुनिक भाषाओं के समान पाली में भी द्विवचन नहीं होता और उसका काम बहुवचन में जिया जाता है। यथा में हमके दोना वचनो को मजा एकरवचन ओर अनेकवचन ही अरिग उरयुक्त होगी। एरु का विवक्षा म एकवचन ओर एर में अरिग की विवक्षा में अनेकवचन का प्रयोग होता है। विभक्ति का म म है। चतुर्थी और षष्ठी के रूप में कोई भेद है ही नहा। अन्तान्ध विभाक्तियों में भी प्रायः समान रूप मिलते हैं। जिस प्रकार संस्कृत में नरुंमरु-लिंग में प्रथमा और द्वितीया के रूप समान होने हैं, उर्मा प्रकार

इसमें भी अनेक शब्दों में प्रथमा और द्वितीया के अनेकवचन के रूप समान होते हैं। तृतीया और पंचमी के अनेकवचन के रूप प्रायः समान-समान मिलते हैं।

साधारणतया विभक्तियों के प्रत्यय ये हैं—

	एकवचन	अनेकवचन
प्रथमा	सि	यो
द्वितीया	अ	थो
तृतीया	ना	हि
चतुर्थी	स	न
पंचमी	स्मा	हि
षष्ठी	स	न
सप्तमी	स्मिं	सु

किंतु विशेष-विशेष शब्दों में विशेष रूप देखे जाते हैं। तृतीया और पंचमी के अनेकवचन के “हि” के स्थान में विकल्प से “मि” पाया जाता है तथा पंचमी एकवचन के “स्मा” के स्थान में “म्हा” और सप्तमी एकवचन “स्मि” के स्थान में “म्हि” भी मिलता है। यह पहले ही लिखा जा चुका है कि पाली में व्यंजनात्त पदों का प्रायः प्रयोग नहीं होता, इसलिये अजंत और हलंत भेद की इसमें योग्यता नहीं है; तथापि संस्कृत में जो पद स्वरात्त हैं, उनके पाली रूपों में तथा संस्कृत के व्यंजनात्त पद जो पाली में स्वरात्त हो जाते हैं, उनके रूपों में बहुत अंतर पाया जाता है, इसलिये संस्कृत के आधर पर स्वरात्त और व्यंजनात्त भेद देने से यहाँ भी सुविधा होगी।

स्वरांत

अकारांत पुल्लिङ्ग बुद्ध शब्द

एकवचन

अनेकवचन

प्र०

बुद्धो

बुद्धा

द्वि०	बुद्धं	दुद्धं
तृ०	बुद्धेन	बुद्धे हि, बुद्धे भि
च०	बुद्धाय, बुद्धस्म,	बुद्धान
प०	बुद्धा, बुद्धस्मा, बुद्धम्हा	बुद्धे हि, बुद्धे भि
प०	बुद्धस्स	बुद्धान
स०	बुद्धे, बुद्धस्मि, बुद्धमिह	बुद्धे सु

ऊपर लिखे रूपां क देखने में भात होगा कि अकारात शब्दों

प्रत्यय इस प्रकार हैं—

	ए०	अने०	ए०	अने०
प्र०	ओ	आ	च० स्स, आय	आनं
द्वि०	०	ए	प० आ, स्मा, म्हा	एदि, एभि
तृ०	इन	एदि, एभि	प० स्म	आन
			म० ः, स्मि, मिह	सु

प्रथमा के बहुवचन में कभी-कभी आने प्रत्यय भी देखा जाता है और यह वैदिक रूप देवासः की छाया पर जात होता है। इसी तरह पचमी और सप्तमी के एकवचना के “स्मा” और “स्मि” र्वनामां के अनुकरण में प्रयोग किए गए हैं, ऐसा प्रतीत होता है। अन्यान्य अकारात पुल्लिङ्ग शब्द भी बुद्ध शब्द के समान होंगे। अकारात नपुंसकलिङ्ग शब्दों के रूप कुछ भिन्न होते हैं। जिस प्रकार संस्कृत में प्रथमा और द्वितीया दोनों में समान रूप होते हैं, उन्हीं प्रकार पाली में भी प्रायः साम्य है और संस्कृत के एकवचन और बहुवचन के ‘अनुस्वार’ और ‘आनि’ पाली में भी पहुँच गए हैं।

था—प्र०	एक०	रूपम्	अने०	रूपानि
द्वि०	”	”	”	रूपानि

प्रथमा और द्वितीया के बहुवचनो में समः ‘या’ और ‘सः’ कल्पिक प्रत्यय भी होते हैं। और-और विभक्तियों में भी कुछ-कुछ

अंतर दृष्टिगोचर होता है, अतः अकारात् नपुंसकलिंग के रूप नीचे दिए जाते हैं—

अकारांत नपुंसकलिंग रूप शब्द

	एकवचन	अनेकवचन	
प्र०	रूप	रूपानि,	रूपा
द्वि०	रूप	रूपानि,	रूपे
तृ०	रूपेन	रूपेहि,	रूपेभि
च०	रूपस्स, रूपाय	रूपानं -	
प०	रूपा, रूपस्मा, रूपम्हा, रूपतो,	रूपेहि	रूपेभि
ष०	रूपस्स	रूपान	
स०	रूपे, रूपस्मि, रूपम्हि	रूपेसु	

इकारांत पुल्लिंग अगिग शब्द

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	अगिग	अग्गी
द्वि०	अग्गिं	अग्गी, अग्गयो
तृ०	अग्गिना	अग्गीहि, अग्गीभि
च०	अग्गिनो, अग्गिस्स	अग्गीनं
प०	अग्गिना, अग्गस्मा, अग्गिम्हा	अग्गीहि, अग्गोभि
ष०	अग्गिनो, अग्गिस्स	अग्गीनं
स०	अग्गिनि, अग्गिस्मि, अग्गिम्हि	अग्गिसु, अग्गीसु
संवा०	अग्गि	अग्गी, अग्गयो, (अग्गियो)

इसी प्रकार अन्य इकारात् पुल्लिंग शब्दों के रूप होंगे ।

किन्मी-किसी इकारात् शब्द क प्रथमा और द्वितीया के बहुवचनों में 'यो' के स्थान में 'नो' होता है । यथा—सारमतिनो, सम्मादिद्धिनो ।

संस्कृत के समान इकारात् स्त्रीलिंग शब्दों के रूप में पाली में भी विशेषता है—यह उदाहरण द्वारा स्पष्ट होगा ।

इकारांत स्त्रीलिंग रत्ति (रात्रि) शब्द

5

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	रत्ति	रत्ती, रत्तियों, रत्तों
द्वि०	रत्ति	रत्ती, रत्तियों, रत्तों
तृ०	रत्तिया, रत्त्या	रत्तीहि, रत्तीभि
च०	रत्तिया, रत्या	रत्तीन्
प०	रत्तिया, रत्त्या	रत्तीष्टि, रत्तीभि
ष०	रत्तिया, रत्त्या	रत्तीन्
स०	रत्तिया, रत्त्या, रत्तिय, रत्त्य	रत्तीमु
सं०	रत्ति	रत्ती, रत्तियों, रत्त्यों

कहाँ-कहाँ पंचमी के एकवचन में तमिलु प्रत्ययवान्ना रत्तिनो रूप भी पाया जाता है ।

सप्तमी के एकवचन में रत्तो रूप भी देखा जाता है ।

इकारांत स्त्रीलिंग 'जाति' शब्द में कुछ विज्ञेयता है । अतः उमने रूप ध्यान देने योग्य हैं—

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	जाति	जाती, जातिनों, जत्तों, जत्तो
द्वि०	जाति	जाती, जानियों, जत्तों, जत्तो
तृ०	जातिया, जत्त्या, जत्त्या	जातीहि, जातीभि
च०	जातिया, जत्त्या, जत्त्या	जातीन्
प०	जातिया, जत्त्या, जत्त्या	जाताष्टि, जातीभि
ष०	जातिया, जत्त्या, जत्त्या	जात न
स०	जातिया, जत्त्या, जत्त्या	जात ए
सं०	जातिय, जत्तं जत्तन्	
सं०	जाति	जाती जत्तों, जत्त्यों, जत्तो

U. P. 10

चतुर्थी से सप्तमी तक के एकवचन में अनेकवचन ही है

प्रथमा और द्वितीया के बहुवचन समान हैं तथा पंचमी और तृतीया के बहुवचन के रूप भी एन-मे हैं। चतुर्थी और षष्ठी के रूप तो सर्वत्र प्रायः समान रहते ही हैं।

संस्कृत के क्तिन् प्रत्ययात् शब्द तथा रस्मि (रश्मि) भूमि, पालि, युवति, धूनि आदि शब्द रति शब्द के समान हैं। भूमि शब्द के सप्तमी के एकवचन में भूम्या रूप भी पाया जाता है।

इकारांत नपुंसक लिंग—वारि शब्द

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	वारि	वारानि, वारी
द्वि०	वाग्	वारीनि, वारी
तृ०	वारिना	वारीहि, वारीभि
च०	वारिस्स, वारिनो	वारीनं
प०	वारिना, वारिस्मा, वारिम्हा	वारीहि, वारीमि
प०	वारिस्स, वारिनो	वारीन
म०	वारिस्मि, वारिम्हि	वारीसु
सं०	वारि	वारीनि, वारी

अट्टि, अक्खि, सप्पि, छदि, सत्थि, दधि, अच्चि आदि शब्दों के रूप भी वारि शब्द के समान होंगे।

उकारांत पुल्लिंग भिक्खु शब्द

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	भिक्खु	भिक्खू, भिक्खवो
द्वि०	भिक्खुं	भिक्खू, भिक्खवो
तृ०	भिक्खुना	भिक्खूहि, भिक्खूमि
च०	भिक्खुस्स, भिक्खुनो	भिक्खुनं
प०	भिक्खुना, भिक्खुस्स, भिक्खुम्हा	भिक्खूहि, भिक्खूमि

	एकवचन	अन्य वचन
प०	भिसवुस्म, भिसवुना	भिसवुन्
म०	भिसवुस्मि, भिसवुस्मि	भिसवुसु
म०	भिसवु	भिसवु . भिसवुसो, भिसवुद

कहीं-कहीं प्रथमा ग्राम द्वितीया के बहुवचनो में यों के स्थान में यो का प्रयोग भी पाया जाता है । तथा—इतुसो, इतुसो ।

पसु, वन्धु, मन्त्रु (मृत्यु), बाहु, केतु, फग्नु (पशु), वेलु (धनु) . उच्छु (इक्षु) आदि शब्दों के रूप भी भिन्न शब्दों के समान होंगे ।

उकारांत नपुंसकलिङ्ग चक्रवु (चक्षु)

	एकवचन	अन्य वचन
प्र०	चक्षु	चक्षुनि, चक्षु
द्वि०	चक्षुं	चक्षुनि चक्षु
तृ०	चक्षुना	चक्षुदि, चक्षुमि
च०	चक्षुस्म, चक्षुना	चक्षुन्
प०	चक्षुना, चक्षुस्मा—ऽटा	चक्षुस्मि, चक्षुभि
प०	चक्षुस्म, चक्षुनो	चक्षुन्
म०	चक्षुस्मि—ऽइ	चक्षुन्
म०	चक्षु	चक्षुनि, चक्षु

प्रथमा के एकवचन में चक्षु रूप भी मिलता है ।

धनु (धनुः), दाक, मधु मधु (डमधु), अग्नु (अग्नुः), वधु (वधुः) आदि उकारांत नपुंसकलिङ्ग शब्दों के रूप भी इसी प्रकार समझने चाहिए ।

पाली में एकारांत चक्रवु शोभाशा शब्दों का प्रायः प्रयोग है । चक्रवु का शब्द पला जाता है । चक्रवु भी चक्रवु शब्दों के प्रयोग के एकवचनो में मधु आदि शब्दों का प्रयोग है ।

गो शब्द

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	गो	गवो, गावो
द्वि०	गव, गावं, गवुं, गावुं	गवो, गावो
तृ०	गवेन, गावेन	गांहि, गोभि, गवेहि
च०	गवस्स, गावस्स	गव, गोनं, गुन्नं
प०	गव, गावा, गवस्म—म्हा	गोहि, गाभि, गवेहि
ष०	गवस्स, गावस्स	गव, गोन, गुन्नं
स०	गवे, गावे, गवस्मि, गावस्मिं, गवम्हि, गावम्हि	गोसु, गवंपु, गावेषु
स०	गो	गवो, गावो

प्राली में विशुद्ध आकारात् शब्दों का प्रायः अभाव है। संस्कृत सखि शब्द का सखा रूप होता है, परंतु इस शब्द के रूप बहुसंख्यक हैं और नियमबद्ध नहीं हैं। किसी-किसी विभक्ति में इकारात् से विभक्ति आती है, कहीं-कहीं आकारात् से। कहीं-कहीं रेफ का भी इसे आगम होता है। उदाहरण से यह स्पष्ट होगा।

सखा शब्द

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	सखा	सखायो, सखानो, सखिनो, सखा
द्वि०	सखान, सखार, सखं	सखी, सखायो, सखानो, सखिनो
तृ०	सखिना	सखारेहि—रेभि, सखेहि—भि
च०	सखिस्स, सखिनो	सखीन, सखान, सखारान
प०	सखिना, सखारा, सखारस्मा	सखेहि, सखेभि, सखारेहि, सखारेभि
ष०	सखिनो, सखिस्स	सखीन, सखानं, सखागन
स०	सखे	सखेतु

	एकवचन	प्रनेकवचन
सं०	मथ, मथा, मथि, मथाया, मथाना.	मथी, मथे मथिना, मथा

आकारांत स्त्रीलिंग कन्या शब्द—'कञ्जा'

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	कञ्जा	कञ्जा, कञ्जायो
द्वि०	कञ्ज	कञ्जा, कञ्जाया
तृ०	कञ्जाय	कञ्जाणि, कञ्जाभि
च०	कञ्जाय	कञ्जान
प०	कञ्जाय	कञ्जाहि, कञ्जानि
प०	कञ्जाय	कञ्जान
स०	कञ्जाय, कञ्जाय	कञ्जामु
स०	कञ्जे	कञ्जा, कञ्जायो

इसी प्रकार पञ्जा, मञ्जा, विञ्जा, तदञ्जा, इञ्जा, गाञ्जा, मना, नावा, गीवा, भिञ्जा आदि शब्दों के रूप हंगे ।

संस्कृत में श्रवावाचक शब्दा के मथोधन एकवचन में ए-व ही जाता है, एका नहीं होता । पाली में भी एका नहीं होता । या दो प्रथमा के एकवचन के समान ही भान रूप होता है अथवा कञ्जा के अनुसार कञ्जाय । पाली में अञ्जा, अञ्जाया, अञ्जायाणि आदि शब्द मातृवाचक हैं । इनके मथोधन एकवचन में ए-वा, अञ्जव; अञ्जा, अञ्ज. अञ्जा, अञ्ज श्री ताता, ताः—ये रूप होते हैं ।

ईकारांत स्त्रीलिंग नदी शब्द

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	नदी	नदी, नदिभो, न-जो
द्वि०	नदि, नदि	नदी, नदिभो, नज्जा

	एकवचन	अनेकवचन
तृ०	नदिया, नज्जा	नदीहि, नदीभि
च०	नदोया, नज्जा	नदीनं
पं०	नदिया, नज्जा	नदीहि, नदीभि
प०	नदिया, नज्जा	नदीन
स०	नदियां, नज्जा, नज्जं	नदीसु
सं०	नदि	नदी, नदियो, नज्जो

मही, वेतरणी, वापी, कदली, घटी आदि शब्दों के रूप भी इसी प्रकार के होंगे। ब्राह्मणी इत्यादि कुछ शब्दों के, संस्कृत के अनुसार, कुछ विशेष रूप भी देखे जाते हैं। यथा प्र० द्वि० तथा सवोधन के बहुवचनो में उसका ब्राह्मण्यो रूप भी होता है। इसी प्रकार तृतीया, चतुर्थी, पंचमी, षष्ठी और सप्तमी के एकवचनों में ब्राह्मण्या तथा स० एक० में ब्राह्मण्यं होता है। इसी तरह दासी शब्द का प्र० द्वि० तथा सवोधन के बहुवचनो में दास्यो तथा तृ० च० पं० प० स० के एकवचनों में दास्या एव म० एक० में दास्य रूप होते हैं।



उकारांत स्त्रीलिङ्ग धेनु शब्द

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	धेनु	धेनू, धेनुयो
द्वि०	धेनुं	धेनू, धेनुयो
तृ०	धेनुया	धेनूहि, धेनूभि
च०	धेनुया	धेनून
प०	धेनुया	धेनूहि, धेनूभि
प०	धेनुया	धेनून
स०	धेनुय, धेनुया	धेनूसु
सं०	धेनु	धेनू, धेनुयो

पञ्चमी के एकवचन में धेनुतो रूप भी प्रायः राधा जाता है ।

धातु, रञ्जु, दह, नश्यु, कञ्छु, विञ्जु, याग, आदि शब्दों के रूप भी इसी प्रकार होंगे ।

ऊकारांत पुल्लिङ्ग मयभू शब्द

	एकवचन	अन्य वचन
प्र०	मयभू	मयभू, मयभूयो
द्वि०	सयभुं	मयभू, मयभूयो
तृ०	मयभुना	मयभूति मि
च०	सयभुम्म, मयभुनो	मयभून्
पं०	मयंभुना, मयभुम्मा—म्हा	मयभूति —मि
प०	मयभुस्त, सयभुनो	मयभून्
स०	सयभुस्मि—ग्दि	मयभून्
स०	मयभू	मयभून्, मयभूयो

ऊकारांत स्त्रीलिङ्ग वधू शब्द

	एकवचन	अन्य वचन
प्र०	वधू	वधू, वधूयो
द्वि०	वधुं	वधू, वधूयो
तृ०	वधुया	वधूति मि
च०	वधुया	वधून्
पं०	वधुया	वधूति मि
प०	वधुया	वधून्
स०	वधुया, वधुय	वधून्
स०	वधु	वधून्, वधूयो

जधू, सरभू, सरभू, वृत्तन्, चन्, राजोरूप पञ्चम तः शब्दों के रूप वधू शब्द के समान होंगे ।

उकारांत पुल्लिङ्ग पितु शब्द (पितृ)

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	पिता	पितरो (पिता)
द्वि०	पितरं	पितगो, पितरे
तृ०	पितरा, पितुना	पितरेहि, पितरेभि, पितूहि, पितुभि
च०	पितु, पितुनो, पितुस्स	पितरान. पितानं, पितुनं, पितुंनं
पं०	पितरा, पितुना	पितून, पितुनं, पितरेहि, पितरेभि, पितूहि, पितुभि
प०	पितु, पितुनो, पितुस्स	पितरानं, पितानं, पितूनं, पितुंनं
स०	पितरि	पितरेसु, पितुसु, पितूसु
सं०	पित, पिता	पितरो

मातु, जामातु आदि शब्दों के ऐसे ही रूप होंगे ।

उकारांत कत्तु शब्द—(कर्तृ)

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	कर्त्ता	कर्त्तारो
द्वि०	कर्त्तार	कर्त्तारो, कर्त्तारे
तृ०	कर्त्तारा, कर्त्तुना	कर्त्तारेहि, कर्त्तारेभि
च०	कर्त्तु, कर्त्तुनो, कर्त्तुस्स	कर्त्तारानं, कर्त्तान, कर्त्तूनं
प०	कर्त्तारा	कर्त्तारेहि, कर्त्तारेभि
प०	कर्त्तु, कर्त्तुनो, कर्त्तुस्स	कर्त्तारान, कर्त्तान, कर्त्तून
स०	कर्त्तरि	कर्त्तारेसु, कर्त्तूसु
सं०	कर्त्त, कर्त्ता, कर्त्ते	कर्त्तारो

सत्यु (शास्त्र), मत्तु (भर्तृ), नेत्तु, मात्तु (ध्यात्), छेत्तु, दात्तु प्रभृति शब्दों के रूप ऐसे ही होंगे ।

उकारांत स्त्रीलिंग मातु शब्द

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	माता	माता. मानरा
द्वि०	मातर	माता. मातरं
तृ०	मातरा, मातुया (क्वचिन्) मत्प्रा, मत्प्रा	मातरति, मातरमि मातृहि मातृभि,
च०	म तु, मातुया, मत्प्रा, मातुम्भ	मातान, मातून (मातुन्), मातरान
प०	मातरा, मातुया, मत्प्रा	मातरंति, मातरंति. मातृति, मातृभि
ष०	मातु, मातुया, मत्प्रा, मातुम्भ	मातान, मातून (मातुन्), मातान
म०	मातरि, मातुया, मत्प्रा, मातुय, मत्प	मातुम्. मातरंति
स०	मात, माता	माता मातरा

धीतु (दुहितृ) शब्द

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	धीता	धीता. धीतरा
द्वि०	धीतर, धीतं	धीतरा. धीतरं
तृ०	धीतरा, धीतुया	धीतरति, धीतरमि, धीतृहि, धीतृभि
च०	धीतु, धीतुया	धीतान, धीतून. धीतरान्
पं०	धीतरा, धीतुया	धीतरंति धीतरमि, धीतृति, धीतृभि
ष०	धीतु, धीतुया	धीतान. धीतून. धीतरान

	एकवचन	अनेकवचन
स०	धीनरि, धीतुया, धीतुय	धीनुसु, धीतरेसु
स०	धीत, धीता	धीता, धीतरो

व्यजनांत

पाली में व्यजनांत पदों का प्रयोग प्रायः नहीं होता, यह पूर्व ही लिखा जा चुका है, परंतु संस्कृत में जो शब्द व्यजनांत हैं, और पाली व्याकरण के अनुसार जब स्वरांत हो जाते हैं, तब भी उनके रूप में साधारण स्वरांत पदों की अपेक्षा भेद रहता है, और प्रायः संस्कृत के व्यजन नकार तकार आदि स्वरांत पदों पर भी अपना प्रभाव प्रकट कर देते हैं। इमलिये सौकर्यार्थ उन्हें (व्यंजनांत जो पाली में स्वरांत हो गए हैं) पृथक् रखना ही उचित होगा।

अत्ता शब्द (आत्मन्)

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	अत्ता	अत्ता, अत्तानो
द्वि०	अत्तान, अत्त	अत्तानो, अत्तं
तृ०	अत्तना, अत्तेन	अत्तनेहि, अत्तनेमि, अत्तेहि, अत्तेमि
च०	अत्तनो, अत्तस्म	अत्तान, अत्तनेहि, अत्तनेमि
प०	अत्तना, अत्तस्मा, अत्तद्वा	अत्तेहि, अत्तेमि
प०	अत्तनो, अत्तस्स	अत्तानं
स०	अत्तनि, अत्ते, अत्तस्मि, अत्तस्मि, अत्तस्मि	अत्तनेसु
स०	अत्त, अत्ता	अत्तानो, अत्ता

ब्रह्मा शब्द

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	ब्रह्मा	ब्रह्मानो

	एकवचन	अनेकवचन
द्वि०	ब्रह्मान, ब्रह्म	ब्रह्मानो
तृ०	ब्रह्मना (ब्रह्मना)	ब्रह्मेति, ब्रह्मभि, ब्रह्मूति, ब्रह्मूभि
च०	ब्रह्मस्म, ब्रह्मना	ब्रह्मान, ब्रह्मन्
पं०	ब्रह्मना (ब्रह्मना)	ब्रह्मति, ब्रह्मभि, ब्रह्मूति, ब्रह्मूभि
प०	ब्रह्मस्म, ब्रह्मना	ब्रह्मान, ब्रह्मन्
स०	ब्रह्मनि, ब्रह्म ब्रह्मन्भि, ब्रह्मस्मि	ब्रह्मन्
सं०	ब्रह्मे	ब्रह्माना, ब्रह्मा

राजा शब्द

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	गजा	गजानो, गजा
द्वि०	गजानं, गजं	गजाना
तृ०	गज्या, गजेन, गजिना	गज्जि, गज्जिभि, गज्जिदि, गज्जिभि
च०	गज्यो, गजिनो, गजस्म	गज्ज, गज्जन, गजान
प०	गज्या, गजस्मा, गजस्म	गज्जि गज्जिभि, गज्जिदि, गज्जिभि
प०	गज्जे, गजिना, गजस्म	गज्ज, गज्जन, गजान
स०	गज्जे, गजिनि, गजस्मि, गज्जिभि	गज्जन्तु, गज्जन्तु
सं०	राज, गजा	गजानो, गजा

पुमा (पुमान्)

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	पुमा, पुमो	पुमा, पुमाना
द्वि०	पुमान् पुमं	पुमानो, पुमाने, पुम
तृ०	पुमाना, पुमना, पुमेन	पुमानेति, पुमानेभि, पुमानेदे, पुमानेभि

	एकवचन	अनेकवचन
च०	पुमुनो, पुमस्स	पुमान
प०	पुमाना, पुमुना, पुमा, पुमस्मा, पुमम्हा	पुमानेहि, पुमानेभि, पुमेहि, पुमेभि
प०	पुमुनो, पुमस्स	पुमानं
म०	पुमाने, पुमे, पुमस्मिं, पुमम्हि	पुमानेसु, पुमासु, पुमेसु
सं०	पुमं, पुम	पुमानो, पुमा

सा (श्वा)

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	सा	मा, सानो
द्वि०	सं, सान	मे, साने
तृ०	सेन, साना	साने, नेहि, सेभि, माहि, साभि
च०	सस्म, माय	सानं
प०	सा, सस्मा, सम्हा, म.ना	मेहि, मेभि. मानेहि, सानेभि
प०	सस्स	मान
स०	से, मस्मि, सम्हि, माने	सासु
स०	स	सा, सानां

गुणवन्तु शब्द—पुल्लिग (गुणवत्)

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	गुणवा	गुणवन्तो, गुणवन्ता
द्वि०	गुणवन्त	गुणवन्ते
तृ०	गुणवता, गुणवन्तेन	गुणवन्तेहि, गुणवन्तेभि
च०	गुणवतो, गुणवन्तस्स	गुणवत. गुणवन्तानं
प०	गुणवता, गुणवन्ता, गुणवन्तस्मा, गुणवन्तम्हा	गुणवन्तेहि, गुणवन्तेभि

	एकवचन	अनेकवचन
प०	गुणवता, गुणवन्तस्म	गुणवन्, गुणवन्तानं
स०	गुणवत्ति, गुणवन्त,	गुणवन्तम्
	गुणवन्तस्मि, गुणवन्तस्मिः	
म०	गुणव, गुणव, गुणवा	गुणवन्ना, गुणवन्ना

कुलवन्तु, यमवन्तु, भगवन्तु, चरन्वुमन्तु आदि शब्दों के रूप इसी प्रकार के होंगे ।

गच्छन्त शब्द (गच्छत्) पुल्लिङ्ग

S

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	गच्छ, गच्छन्तो	गच्छ, गच्छन्ता गच्छन्ता
द्वि०	गच्छन्त	गच्छन्त
तृ०	गच्छता, गच्छन्तं	गच्छन्तं, गच्छन्तंभि
च०	गच्छतो, गच्छन्तस्म	गच्छत, गच्छन्तान्
प०	गच्छता, गच्छन्ता,	गच्छन्ते, गच्छन्तभि
	गच्छन्तस्मा, गच्छन्तस्मा	
प०	गच्छता, गच्छन्तस्म	गच्छन् गच्छन्तान
स०	गच्छति, गच्छन्ते,	गच्छन्तु
	गच्छन्तस्मि, गच्छन्तस्मि	
म०	गच्छत	गच्छन्ता

चरन्त, तिष्ठन्त, रुदन्त, सुणन्त (शृण्वन्) , पचन्त (पचन्) प्रभृति शब्दों के ऐसे ही रूप होंगे ।

भवन्त और अरहन्त शब्दों के प्रथमा एकवचन के भेद अरहा रूप भी होते हैं ।

भवन्त शब्द के रूप भी गच्छन्त के समान होंगे । विशेषता यह है—प्र० व० भवन्तो, भवन्तो, भवन्ताः तृ० ए० भवता, भवता, भवन्तेन, च० प० एक० भवतो, भवतो, भवन्तस्तः रुदो० ए० भो,

मन्ते, भोन्ते; बहु० भवन्ती, भोन्वतो, भवन्ता, भोन्ता । सन्त शब्द के तृ० व० में मन्भि रूप विकल्प में होता है ।

अद् शब्द (अध्वन्)

एकवचन	अनेकवचन
प्र० अद्वा	अद्वा, अद्वानो
द्वि० अद्धान	अद्धाने
तृ० अद्दुना	अद्धानेहि, अद्धानेभि
च० अद्दुना	अद्धान
प० अद्दुना	अद्धानेहि, अद्धानेभि
प० अद्दुना	अद्धान
स० अद्दनि, अद्दाने	अद्दानेसु
स० अद्द	अद्वा, अद्धानो

यहाँ यह नोट करने योग्य है कि तृतीया, चतुर्थी, पंचमी और षष्ठी में संस्कृत के अध्वन् शब्द के वकार के प्रभाव के कारण सप्रसारण उकार हुआ है ।

युव शब्द (युवन्)

एकवचन	अनेकवचन
प्र० युवा (यूनो)	युवा, युवानो, युवाना
द्वि० युवानं, युवं	युवाने, युवे
तृ० युवाना, युवनेन, युवेन	युवानेहि, युवानेभि, युवंहि, युवं
च० युवानस्स, युवस्स	युवानानं, युवान
प० युवाना, युवानस्मा, युवानम्हा	युवनेहि, युवानेभि, युवेहि, युवेभि
प० युवानस्स, युवस्स,	युवानानं, युवानं
स० युवाने, युवं युवानस्मि,	युवानेसु, युवःसु, युवेसु

doit

आयु शब्द (आयुस्)

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	आयु, आयुं	आयू, आयूनि
द्वि०	आयु, आयुं	आयू, आयूनि
तृ०	आयुना, आयुसा	आयूहि, आयूभि
च०	आयुस्स, आयुनो	आयूनं, आयुसं
पं०	आयुना, आयुसा	आयूहि, आयूभि
प०	आयुस्स, आयुनो	आयूनं, आयुस
स०	आयुनि, आयूसि	आयूसु
स०	आयु, आयुं	आयू, आयूनि

दण्डी शब्द

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	दण्डी	दण्डी, दण्डिनो (दण्डियो)
द्वि०	दण्डिन, दण्डिं (दण्डिय)	दण्डी, दण्डिनो (दण्डिने, दण्डिये)
तृ०	दण्डिना	दण्डीहि, दण्डीभि
च०	दण्डिनो, दण्डिस्स	दण्डीनं
प०	दण्डिना, दण्डिस्सा, दण्डिस्सा	दण्डीहि, दण्डीभि
प०	दण्डिनो, दण्डिस्स	दण्डं न
स०	दण्डिनि, दण्डिने दण्डिस्सिं, दण्डिस्सि	दण्डीसु, दण्डिनेसु
सं०	दण्डि	दण्डी, दण्डिनो

गुणवन्तु शब्द नपुंसकलिंग

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	गुणवं, गुणवन्तं	गुणवन्ता, गुणवन्तानि, गुणवन्ति
द्वि०	गुणवन्तं	गुणवन्ते, गुणवन्तानि, गुणवन्ति

तृतीया प्रभृति में पुल्लिङ्ग शब्द के समान रूप होंगे। वन्न, मन्त्
प्रत्ययान्त नपुंसकलिङ्ग शब्दों के रूप होंगे ही होंगे।

अकारांत गच्छन्त शब्द नपुंसकलिङ्ग (गच्छन्)

एकवचन

अनेकवचन

प्र० गच्छ, गच्छन्

गच्छन्ता, गच्छन्तानि

द्वि० गच्छन्तं

गच्छन्ते, गच्छन्तानि

शतृ प्रत्ययात् मव शब्दों के रूप नपुंसकलिङ्ग में होंगे ही होंगे।

मह (महत्) शब्द के रूप में विशेषता है -प्र० ए० मा, महन्त,

महा; बहु०—महन्ता, महन्तानि, द्वि०—एक० महन्त, बहु०—

महन्ते, महन्तानि, तृतीया प्रभृति के रूप पुल्लिङ्ग के समान होंगे।

सर्वनाम

जिम प्रकार संस्कृत में सर्वनाम के रूपों में कुछ-कुछ अंतर रहता है,
उसी प्रकार पाली में भी विशेषताएँ हैं। र्ग संबंध में भी पाली
संस्कृत का बहुत अधिक अनुकरण करती है। यह उदाहरण में स्पष्ट
होगा !

पुल्लिङ्ग सर्व शब्द (सन्ध)

एकवचन

अनेकवचन

प्र० सन्धो

सन्धे

द्वि० सन्ध

सन्धे

तृ० सन्धेन

सन्धेहि, सन्धेभि

च० सन्धस्स

सन्धेम, सन्धेमानं

प० सन्धस्मा, सन्धम्हा

सन्धेहि, सन्धेभि

प० सन्धस्स

सन्धेम, सन्धेमानं

स० सन्धस्मिं, सन्धम्हि

सन्धेमु

स० सन्ध, सन्धा

सन्धे

सब्बा शब्द (आकारात् लौलिंग) के रूप कज्जा शब्द के रूप के सदृश होंगे, केवल चतुर्थी षष्ठी के एकवचन में सब्बस्सा, बहुवचन में सब्बासं, सब्बासानं तथा सप्तमी के एकवचन में सब्बस्सं रूप होते हैं ।

नपुंसकलिंग सब्ब शब्द के केवल प्रथमा, द्वितीया और संबोधन के रूपों में विशेषता है । अन्य सब रूप पुल्लिंग के नमान होते हैं ।
प्र० द्वि०—ए० सब्बं; बहु०—सब्बानि संबोधन एक०—सब्ब, सब्बा; बहु०—सब्बानि ।

कतर, कतम, उमय, इतर, अज्ज, अज्जतर, अज्जतम आदि शब्दों के रूप सब्ब शब्द के समान होते हैं ।

संस्कृत में जिस प्रकार पूर्वादिगण के रूप में थोड़ी विशेषता पाई जाती है, ठीक उसी प्रकार पाली में भी पुंस्व, पर, अपर, टक्खिन, उत्तर शब्दों के सर्वत्र सब्ब शब्द के समान रूप होने पर भी प्रथमा और संबोधन के बहुवचन में और पंचमी और सप्तमी के एकवचन में विकल्प से बुद्ध शब्द के समान रूप होते हैं ।

लौलिंग में—चतुर्थी, षष्ठी, सप्तमी—एक० में विकल्प से कज्जा शब्द के समान रूप होते हैं । इसी तरह नपुंसकलिंग में षष्ठमी और सप्तमी के एकवचन में विकल्प से चित्त शब्द के समान रूप होते हैं ।

यद् शब्द (य)

य शब्द के रूप सर्वत्र सब्ब शब्द के समान होते हैं । यथा—पु० प्र० एक० यो—बहु० ये; द्वि० ए० यं—बहु० ये; तृ० ए० येन—बहु० येहि, येमि इत्यादि ।

तद् (त)

त शब्द के पुल्लिंग के प्रथमा के एकवचन में सो, तथा लौलिंग प्रथमा के एकवचन में सा होता है—अन्यत्र सर्वत्र ही सब्ब शब्द के समान रूप होते हैं । केवल यह विशेषता है कि इसके पुल्लिंग और

तृ० पं० एक०
 च० प० एक०
 स० एक०

एताय, एतिस्मा
 एताय, एतिस्सा, एतिस्साय
 एताय, एतिस्सं, एतस्स, एताय

इम (इदम्)

पुल्लिङ्ग

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	अयं	इमे
द्वि०	इम	इमे
तृ०	अनेन, इमिना	एहि, एभि, इमेहि, इमेभि
च०	अस्त, इमस्त	एस, एसानं, इमेसं, इमेसानं
पं०	अस्मा, इमम्हा	एहि, एभि, इमेहि, इमेभि
ष०	अस्त, इमस्त	एसं, एसानं, इमेसं, इमेसानं
स०	अस्मि, इमस्मि, इमम्हि, एसु, इमेसु	

स्त्रीलिङ्ग

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	अय	इमा, इमायो
द्वि०	इमं	इमा, इमायो
तृ०	इमाय	इमाहि, इमाभि
च०	इमाय, इमिस्सा, इमिस्साय, इमास, इमासानं	
	अस्सा, अस्साय	
प०	इमाय	इमाहि, इमाभि
ष०	इमाय, इमिस्सा, इमिस्साय, अस्सा, अस्साय	इमासं, इमामानं
स०	इमाय, इमिस्सं, अस्स	इमासु

नपुंसकलिङ्ग

प्र० द्वि० एक० इदं, इम; बहु० इमानि

अन्यत्र पुल्लिङ्ग के समान रूप होते हैं ।

किसी-किसी के मत में इन शब्द के पृथक् न पर न परतिरिक्त
 लीङ्ग तृ० प० एकवचन में अस्मा और इमिस्मा ; च० प०
 बहुवचन में आस तथा मत्तमी के एकवचन में इमाय भी रूप
 होते हैं ।

अमुशब्द—(अद्स्)

पुल्लिङ्ग

	एकवचन	प्रनेवचन	Nomi
प्र०	अनु (अम्)	अम्, अम्	Accusative
द्वि०	अमुं	अम्, अम्	Indicative
तृ०	अमुना	अम्, अम्	Genitive
च०	अमुने, अम्	अम्, अम्	Abolative
पं०	अमुना, अम्	अम्, अम्	Locative
प०	अमुना, अम्	अम्, अम्	Locative
स०	अमुस्मि, अम्	अम्	Vocative

स्त्रीलिङ्ग

	एकवचन	प्रनेवचन
प्र०	अम्, अम्	अम्, अम्
द्वि०	अम्	अम्, अम्
तृ०	अमुया	अम्, अम्
च०	अमुया, अम्	अम्, अम्
पं०	अमुया	अम्, अम्
प०	अमुया, अम्	अम्, अम्
स०	अमुयं, अम्	अम्

नपुंसकलिङ्ग में प्र० द्वि० ए० अमु—अनेकवचन—अमू को छाँ कर अन्य सब रूप पुल्लिङ्ग के समान होते हैं ।

किं शब्द (किम्)

किम् शब्द के स्थान में संस्कृत में क आदेश होता है, पाली में भी के स्थान में क आदेश होकर क शब्द अकारात् बन जाता है, और उ रूप सब्ब शब्द के ममान होते हैं । विशेषता केवल यह है कि पुल्लिङ्ग नपुंसकलिङ्ग के चतुर्थी और षष्ठी के एकवचन में वैकल्पिक रूप कि तथा सप्तमी के एकवचन में किस्मि और किम्हि भी पाए जाते हैं ।

किं शब्द पुल्लिङ्ग

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	को	के
द्वि०	कं	के
घृ०	वेन	केहि, केभि
च०	कस्स, किस्स	केम, केमानं
पं०	कस्मा, कम्हा	केहि, केभि
प०	कस्स, किस्स	केस, केसानं
स०	कस्मि, कम्हि, किस्मि, किम्हि	केसु

स्त्रीलिङ्ग कं रूप ठीक सब्बा शब्द के समान होते हैं । नपुंसक में—प्र० द्वि० एक० में क, बहु० में कानि पद होता है । किसी-के मत से प्र० द्वि० के एकवचन में कि पद होता है । अन्य सब क्रियाओं के रूप पुल्लिङ्ग के समान होते हैं ।

पाली में को शब्द कमी-कभी कू के स्थान में भी प्रयुक्त होता कहीं-कहीं कथ के अर्थ में भी को शब्द देखा जाता है ।

पं० विधुशेखर भट्टाचार्य ने इस स्थल में उदाहरण-स्वरूप 'ते बल महाराज', इत्यादि उद्धृत किया है ।

तुम्ह शब्द—(युष्मत्)

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	त्व, तुव	तुम्हें
द्वि०	त्व, तुर्व, तव, त	तुम्हें, तुम्हारा
तृ०	त्वया, तथा	तुम्हें, तुम्हें
च०	तव, तुम्ह, तुम्हें	तुम्हारा
पं०	त्वया, तथा	तुम्हें, तुम्हें
ष०	तव, तुम्ह, तुम्हें	तुम्हारा
स०	त्वयि, त्वि	तुम्हें

किमी-किमी के मत में द्वि० एक० और बहु० में तुम्हें तथा प० एक० में त्वया रूप भी होते हैं ।

इसके अतिरिक्त तृ० च० पद्यों के एक वचन में त तथा प्र० द्वि० तृ० च० पद्यों के बहुवचन में वो रूप भी होता है ।

स्त्रीलिंग में भी यही रूप होंगे । ने प्रायः जो पद, मन्त्रों के मन्त्रान्त्र अपादादि में ही प्रयोग किए जाते हैं । पाठ के अर्थ में उनका प्रयोग नहीं होता ।

अम्ह शब्द—(अरमद्)

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	अम्ह	मम्ह, अम्हें
द्वि०	मं मम्ह	अम्हें, अम्हें
तृ०	मया	अम्हें, अम्हें
च०	मम्ह, मम्ह, मम्हें, अम्ह	अम्हारा, अम्हारा
पं०	मया	अम्हें, अम्हें
ष०	मम्ह, मम्ह, मम्हें, अम्ह	अम्हारा, अम्हारा
स०	मयि	अम्हें

अन्य मत से—प्र० के बहुवचन में अस्मा, द्वि० के एकवचन में अर्हं बहु० में अस्मा तथा सप्तमी बहु० में अस्मासु रूप भी पाए जाते हैं ।

इसके अतिरिक्त तृ० च० प० के एकवचन में मे तथा प्र० द्वि० तृ० च० और पद्यी के बहुवचन में नो रूप भी पाया जाता है ।

संख्या—शब्द

एक शब्द के रूप सर्वत्र ही सब्ब शब्द के समान होंगे ।

संस्कृत में उभ शब्द नित्य द्विवचनात् है; पाली में द्विवचन के अभाव में यह शब्द बहुवचन में प्रयुक्त होता है, और इसके तीनों लिंगों के रूप समान होते हैं ।

बहुवचन

प्र०	द्वि०	उभो, उभे
तृ०	प०	उभोहि, उभोभि, उभेहि, उभेभि
च०	प०	उभिन्न'
स०		उभोसु, उभेसु

कति शब्द नित्य बहुवचनात् है, तथा इसके भी तीनों लिंगों में समान रूप होते हैं ।

बहुवचन

प्र०	द्वि०	कति
तृ०	प०	कतीहि, कतीभि
च०	प०	कतीनं, कतिन्न'
स०		कतीसु

द्वि शब्द

द्वि शब्द भी पाली में बहुवचनात् है, और इसके भी रूप तीनों लिंगों में समान होते हैं ।

बहुवचन

प्र०	द्वि०	दुः, द्वे
तृ०	पं०	द्वीद्वि द्वीभि
च०	प०	दुषिन्न, द्विन्न
स०		द्वीसु

ति—(त्रि शब्द ; यह शब्द स्वभावतः बहुवचन है ।)

	पुल्लिग	स्त्रालिग	नपुंसकलिग
प्र० द्वि०	तथा	तिस्मां	तांनि
तृ० प०	तीद्वि, तीभि	ताद्वि, तीभि	तीद्वि, तीभि
च० प०	तिगण्, तिगण्ण	तिम्मन्न	तिगण् निगण्ण
स०	तीसु	तासु	तीसु

यहाँ पर प्र० द्वि० में मस्कृत के रूपों का प्रभाव स्पष्ट प्रकट है। पृष्ठी के रूप में भी मस्कृत की छाया विद्यमान है। तिस्रो-तिस्रों के मत में च० प० के स्त्रालिग में तिम्म, निगण्ण रूप भी होते हैं।

चतुःशब्द (चतुर)

	पुल्लिग	स्त्रीलिग	नपुंसकलिग
प्र० द्वि०	चत्वारो, चतुरो	चत्तस्मां	चत्वारि
तृ० पं०	चतुर्वि, चतुर्भि	चतुर्वि, चतुर्भि	चतुर्वि, चतुर्भि
च० प०	चतुर्ध्रं	चतुर्म्मन्न	चतुर्ध्रं
स०	चतुर्सु	चतुर्सु	चतुर्सु

पंच शब्द के तीनों लिगों में समान रूप होते हैं।

प्र० द्वि०	पंच
तृ० प०	पंचद्वि, पंचभि
च० प०	पंचध्रं

स० पचसु

छ, सत्त, अट्ठ, नव, दश, एकादस, द्वारस अथवा द्वादस वा वारस, तेरस वा तेत्तस, चतुद्दस या चोद्दस, पचदस वा पण्णरस, सोरस वा सोलस, सत्तदस वा सत्तरस तथा अट्ठादस वा अट्ठारस शब्दों के रूप इसी प्रकार समझने चाहिए।

विंशति प्रभृति नवति पर्यंत सख्या-वाचक शब्द संस्कृत में एकवचन होते हैं, उसी आधार पर पाली में भी इनके पर्यायवाचक शब्द एकवचन ही होते हैं।

एकूनवीसति प्रभृति शब्द स्त्रीलिंग हैं।

एकूनवीसति

एक

प्र०

द्वि०

तृ च० पं० प०

स०

एकूनवीसति

एकूनवीसति

एकूनवीसतिया

एकूनवीसतिया, एकूनवीसतिय

तृतीया आदि में विकल्प से एकूनवीसत्या रूप भी होते हैं। चीसति, एकवीसति, द्वेवीसति, वा द्वावीसति, वा त्वावीसति इत्यादि ति प्रत्ययात् रूप इसी प्रकार होंगे।

विंशति प्रभृति संस्कृत शब्दों के स्थान में पाली में वीसति और वीसा एकवीसति; एकवोमा, द्वावीसति; द्वावीसा, तिसति, तिसा, चत्तालीमति, चत्तालीसा इत्यादि दोनों रूप होते हैं।

इनमें ति प्रत्ययात् के रूप इकारात् रत्ति शब्द के समान तथा आकारात् वीसा प्रभृति के रूप—आकारात् स्त्रीलिंग के रूपों के समान होंगे। विशेषता केवल यह कि आकारात् वीसा प्रभृति शब्द के प्रथमा के एकवचन में वीसा, एकवीसा आदि के स्थान में वासं एकवीसं आदि रूप दृष्टिगोचर होते हैं।

मत (गत), महस्य लस्य आदि शब्द नपुंसकलिङ्ग के, प्राङ् इत्ये
रूप चित्त शब्द के समान प्राङ् । तथा कौटि, पकोटि (प्रकोटि)
प्रभृति स्त्रीलिङ्ग शब्दों के रूप गति शब्द के समान प्राङ् ।

दुरोमील ने मन्व्या शब्द तथा उनके पुरगा रिकप्रत्यय न करी की मन्वा
दी है । पुरगार्थक अधिकतर सम्स्कृत के तम के स्थान में मन्वा से बनते
हैं । कुछ सख्याएँ यहाँ दी जाती हैं- -

		पुरगा रिक
१	एक	पठम
२	द्व	दुनिय
३	तथो	ततिय
४	चत्वारो	चतुर्थ
५	पञ्च	पञ्चम, पञ्चम
६	छ	छट्ट, छट्टम
७	सत्त	सप्त, सत्तम
८	अष्ट	अष्टम
९	नव	नवम
१०	दश, दश, दश, दश	दशम
११	एकादश, एकादश	एकादशम, एकादशम
१२	द्वादश, द्वादश	द्वादशम
१३	तेदश, तदश, तेलन	तेदशम
१४	चतुदश, चतुदश	चतुदशम
१५	पञ्चदश, पञ्चदश, पञ्चदश	पञ्चदशम
१६	षोडश, षोडश	षोडशम
१७	सत्तदश, सत्तदश	सत्तदशम
१८	अष्टदश, अष्टदश	अष्टदशम
१९	एकविंशति, एकविंशति, एकविंशति	एकविंशति

२०	वीसति, वीस	वीसतिम
२१	एकवीसति, एकवीसं	एकवीसतिम
३०	तिसति, तिस	तिसतिम
४०	चत्तालीस, चत्तारीसं	चत्तालिमतिम
५०	पञ्चास, पञ्चास	पञ्चासम
६०	सष्टि	सष्टिम
७०	सप्तति	सप्ततिम
८०	असीति	असीतिम
९०	नवुति	नवुतिम
१००	सत	सतम
२००	वासत, द्वासत	वाभतम
१०००	सहस्र	सहस्रम

क्रिया-विभाग

संस्कृत के समान पाली में भा क्रियाश्रा के दो पद होते हैं, परस्मैपद और आत्मनेपद, जैसा कि इन पदों के नामकरण से प्रतीत होता है। क्रिया का फल यदि कर्ता को हो, तो आत्मनेपद, यदि कर्ता से अतिरिक्त किसी को हो, तो परस्मैपद होना चाहिए। संस्कृत में ही शनै-शनैः इस नियम में शिथिलता आती गई, और अंत में यह पद-विभाग-प्रथा पर निर्भर हो गया। पाली में आते-आते इसमें और भी शिथिलता हो गई। कहने के लिये पाली में भी दो ही पद होते हैं। संस्कृत में जिस प्रकार अनुदात्त, डित् आत्मनेपद का द्योतक है, स्वरित, जित् परस्मैपद का परिचायक है, यह सब नियम पाली में कुछ नहीं हैं। पाली में प्रायः परस्मैपद का ही प्रयोग होता है। केवल कहीं-कहीं आत्मनेपद दृष्टिगोचर हो जाता है। यहाँ तक कि कर्मवाच्य, भाववाच्य, कर्मकर्तृवाच्य आदि प्रयोगों में जहाँ संस्कृत

में आत्मनेपद होना आवश्यक है, वही भी पाली में प्रायः विकल्प पाया जाता है। म-कृत को धातु पाठायन्ती दम गणा में विभक्त है, किंतु पाली में केवल मात गण ही माने गए हैं। अथात् अदि, रुधादि, दिवादि, स्वादि, क्रादादि, तनादि और चगादि। म-कृत के बाकी तीन गण—अदादि, तुदादि और पुगेत्यादि—आदि गण के अतर्गत माने गए हैं।

मस्कृत में धातुगण दम प्रकार में प्रयुक्त होते हैं। लिट्, लृट्, लृट् और विधिलिट्; लिट्, लुट्, लृट्, आशीर्लिङ्, लुङ् और लृङ्। किंतु पाली में आशीर्लिङ् और लुङ् का प्रयोग नही होता। इसमें केवल आठ ही लकार रह जाते हैं। लिट् लकार का प्रयोग भी पाली में बहुत ही कम होता है। लट् और लृट् अतः काल प्रातित रहते हैं। इनमें से भी प्रायः भूतकाल-मात्र च्योतित रहने के लिये लुङ् के रूपां ही का पाली में प्रचुरता से प्रयोग पाया जाता है।

		लट् लकार भू धातु			
		परस्मैपद		आत्मनेपद	
	एकवचन	बहुरचन		एकवचन	बहुरचन
प्रथम पुरुष	भवति	भवन्ति		भवते	भवन्ते
	एकवचन	बहुरचन		एकवचन	बहुरचन
मध्यम पुरुष	भवामि	भवाम		भवसे	भवसे
उत्तम पुरुष	भवामि	भवाम		भवे	भवामे

नोट—स्वादिगणाय धातु के उत्तर स्थित अकार (विभक्त अकार) का विकल्प से लोप होता है, और इससे स्थान में एकार होता है, इस नियम के अनुसार भवेणि, भवेन्ति, स्वादि रूप भी ही स्रुते हैं।

पाली-प्रबोध

भूधातु के स्थान में विकल्प से हू आदेश भी होता है—

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	होति	हान्ति
म०	हासि	होथ
उ०	होमि	होम

इन उदाहरणों में प्रकट होगा कि लट् लकार के प्रत्यय संस्कृत के अनुसार ही होते हैं। केवल आत्मनेपद के मध्यमपुरुष बहु-वचन में ध्वे के स्थान में व्हे होता है। यथा—

	परस्मैपद		आत्मनेपद	
	एक०	बहु०	एक०	बहु०
प्र०	ति	अति	ते	अत (रे)
म०	सि	थ	मे	व्हे
उ०	मि	म	ए	म्हे

संस्कृत में जिस प्रकार मि और मा में पूर्व अकार दीर्घ हो जाता है, उसी प्रकार पाली में भी मि, म और म्हे के पूर्व स्थित अकार को दीर्घ हो जाता है।

पच, यज, वह, धम (ध्मा) आदि धातुओं के रूप इसी प्रकार होंगे।

ठा—(स्था)

संस्कृत में सार्वधातुक लकारों में स्था के स्थान में नित्य तिष्ठ आदेश होता है। पाली में उसका बिलकुल तिङस्कार नहीं हो सका, और ठा के स्थान में विकल्प से तिष्ठ आदेश होता है।

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	ठाति, तिष्ठति	ठन्ति, तिष्ठन्ति
म०	ठासि, तिष्ठमि	ठाथ, तिष्ठथ
उ०	ठामि, तिष्ठामि	ठाम, तिष्ठाम

जुहोत्यादि गण की कुछ आकारात् धातुओं में द्वित्वकार्य का प्रभाव देखा

जाता है। अन्य मत्र आकाश धातु ठा वान के समान दामी। ना श्रीर
भा धातु क्रमशः गं श्रोण् थ्य धातु न बनी हैं, उमलिय इनके रूप गाति
श्रीर भाति न होकर मंसूत के ए के प्रभाव में प्राय च्छुन गातिन।
गायन्ति, भायति, भायन्ति इत्यादि होते हैं। मंसूत का पाली म प्रभाव
कितना पडा है, श्रा पाली मंसूत में प्रथवा मंसूत यानी में निम्नी
है, इस विषय पर विचार करनेवाला री उमने भी माशर्य मिलेगा।

कभी-कभी सम्, उत, प्रति, उ, नि उपसर्ग पर रहने पर टा के
स्थान में ठह आदेश हा जाता है, श्रागे जाऊ टिरी में वी पिना
उपसर्ग के भी ठहना बन जाता है। उदाहरण मटहति, मटाति
उट्टहाति, उट्टाति इत्यादि।

कभी-कभी ग्रधि श्रीर उन् उपसर्ग के साथ टा धातु के आराग के
स्थान में एराग होता है। अधिट्टे न्ति, उट्टे न्ति। प धातु के स्थान में
भी विकल्प में पिव आदेश होता है तथा पिव का दमा भी
विकल्प में बकाग हो जाता है।

पिवति, पिवति, पाति: पिवन्ति, पिवन्ति, पन्ति आदि।

दिश (दृश्) धातु के स्थान में विकल्प में पन्म, डिम्म आदि
दक्ख आदेश होते हैं। पस्मति, पम्मन्ति, डिम्मन्ति, डिम्मन्ति: ३ रति,
दक्खन्ति इत्यादि।

गम धातु के स्थान में विकल्प में गच्छु श्रीर धम्म आदेश होते
हैं। गच्छति, गच्छन्ति, धम्मति, धम्मन्ति गमति, गमेति इत्यादि
रूप होते हैं।

वद धातु के स्थान में विकल्प में वज्ज आदेश होता है। वधा—
वज्जति, वज्जन्ति, वज्जेति, वदति, वदान्ति, वज्जति, वदेति
इत्यादि।

यम धातु के स्थान में विकल्प में यच्छु श्रीर यम आदेश होते हैं। यम—
यच्छति, यच्छन्ति, यमति, यमन्ति इत्यादि।

सद धातु के स्थान में सीद श्रादेश होता है । यथा—सीदति, सीदन्ति इत्यादि ।

जि धातु के रूप संस्कृत के समान जयति, जयन्ति आदि भी होते हैं और विकल्प से जेति, जेन्ति आदि रूप भी होते हैं । जिस प्रकार संस्कृत में एक ही धातु कभी-कभी भिन्न-भिन्न गणों में पाई जाती हैं, उसी प्रकार पाली में भी कोई-कोई धातु भिन्न-भिन्न गणों में मिलती हैं । जि धातु इसका एक उदाहरण है । इसके रूप ऋयादि गण के विकरण सहित भी मिलते हैं । यथा—

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	जिनाति	जिनन्ति
म०	जिनासि	जिनाथ
उ०	जिनामि	जिनाम

नी धातु के रूप भी दो प्रकार के होते हैं—नयति, नयन्ति और जेति, नेन्ति इत्यादि ।

सर (सु) के रूप—सरति, सरन्ति—आदि होते हैं ।

दूसरे-दूसरे गणों की संस्कृत की ऋकारात् अन्य धातुओं के भी रूप प्रायः इसी प्रकार होते हैं ।

ऊपर कहे गए गच्छ आदि आदेश संस्कृत में यद्यपि केवल लट्, लोट, विधिलिङ् और लङ् में ही होते हैं, परंतु पाली में सभी लकारों में ये आदेश पाए जाते हैं । यहाँ तक कि कर्मो-कर्मि ये सब आदेश कृत् प्रत्ययों तक में पाए जाते हैं । विकरण के सबब में भी यही नियम है । पाली के अकार यकार आदि विकरण—लट् आदि सर्वधातुक लकारों में ही बद्ध नहीं रहते, किंतु सभी लकारों में होते हैं ।

अदादि गण धातु

पाली में जैसा कि पहले लिखा गया है, केवल सात गण होते हैं । और अदादि जुहोत्यादि तथा तुदादि गण की संपूर्ण धातुओं का

समावेश आदिगण में कर दिया गया है। परन्तु अर्थ में मन्त्र में अदादि, जुहान्यादि प्रकृति गणा न गण प्रयुक्त जो विकार होत है, उनका आभाग पाली तरु में पहुँचना है, प्राग्वह्य में आदिगण में पृथक्-ही स्पष्ट प्रतीत होता है। इमनिने मुदिता न हेतु इनका यहाँ पृथक् निर्देश करना ही उचित प्रतीत होता है।

इ धातु—(गमनार्थक)

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	एति	एन्ति, गन्ति
म०	एमि	एथ
उ०	एमि	एम्

या धातु के रूप याति, गन्ति आदि वा धातु के गानि, गन्ति, या के भाति, भन्ति; पा के पाति, पन्ति आदि ह.गे।

ब्रू धातु

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	ब्रूते	ब्रूवन्ते
म०	ब्रूसे	ब्रूहे
उ०	ब्रूव	ब्रूहे

सी (शी) धातु के रूप विचल्प में आ शी अदादि दोनों गणों के अनुसार मिलते हैं। यथा—नयति, सयति अदि तथा—मनि, सेन्ति; सेते, सेन्ते इत्यादि।

अस धातु

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	असि	असि
म०	असि, अदि	अथ
उ०	अस्मि, अदि	अस्म, अम्

आस धातु

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अच्छति	अच्छन्ति
म०	अच्छसि	अच्छथ
उ०	अच्छामि	अच्छाम

उप प्रर्वक आस धातु के रूप उपासति, उपासन्ति आदि होते हैं ।

हन धातु

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	हनति, हन्ति	हनन्ति
म०	हनसि (कहीं-कहीं हनासि)	हनथ
उ०	हनामि	हनाम

हन धातु के स्थान में विकल्प से वध आदेश होता है । उस दशा में उसके रूप वधति, वधन्ति इत्यादि होंगे ।

वच धातु के वचति, वचन्ति इत्यादि रूप होते हैं । कभी-कभी प्रथम पुरुष के एकवचन में वचि रूप भी मिलता है ।

दुह धातु के दुहति, दुहन्ति आदि रूप होते हैं । तथा विकल्प से दोहति, दोहन्ति आदि रूप भी मिलते हैं ।

लिह धातु के रूप लिहति, लिहन्ति आदि तथा विकल्प से लेहति लेहन्ति आदि होते हैं ।

रुद धातु के रुदति, रुदन्ति आदि तथा विकल्प में रोदति, रोदन्ति आदि रूप होते हैं ।

विद धातु के विदति, विदन्ति आदि रूप होते हैं ।

तुदादिगण

पुच्छ धातु—पुच्छति, पुच्छन्ति इत्यादि । इस (इप) धातु के स्थान में विकल्प से इच्छ आदेश होता है । यथा—इच्छति, इच्छन्ति आदि । विकल्प पक्ष में—एमति, एमन्ति आदि रूप होते हैं ।

गिर गिल (ग)—गिरति, गिरन्ति, गिलनि, गिलन्ति इत्यादि ।
मग (मृट्) धातु के स्थान में विकल्प में मीय्य प्रीय्य आदेश
होते हैं । यथा—मीय्यति, मीय्यन्ति, मीयति, मीयन्ति, मगति,
मगन्ति इत्यादि ।

सिञ्च धातु—सिञ्चति, सिञ्चन्ति आदि ।

लिय—लिम्पति, लिम्पन्ति इत्यादि ।

नोट—हिंदी में आकर लिम्पति का मकार लुप्त हो गया, प्रीय्य के स्थान
लीयना रूप रह गया ।

मुञ्च—मुञ्चति, मुञ्चन्ति इत्यादि ।

विद्—विन्दति, विन्दन्ति ।

फुम (स्पृश)—फुमति, फुमन्ति इत्यादि ।

द्विवादिगण

संस्कृत के समान पाली में भी द्विवादिगण में धातु के उत्तर 'य' विकरण होता है । परन्तु यह यकार जन, वा इत्यादि धी-धी धातुओं में ही प्रत्यक्ष दिखाई देता है । अभिप्राय धातुओं में अभिप्राय उभे पूर्व रूप हो जाता है । यथा दिव—दिव+य+ति=दिच्यति ।

दिव धातु—दिच्यति, दिच्यन्ति आदि ।

मिच—मिच्यति, मिच्यन्ति आदि ।

युध—युज्जति, युज्जन्ति इत्यादि ।

बुध—बुज्जति, बुज्जन्ति इत्यादि ।

हिंदी में आकर यही ब्रूजना हो जाता है ।

कुध—कुज्जति, कुज्जन्ति इत्यादि ।

विध (व्यध)—विज्जति, विज्जन्ति इत्यादि ।

पद्—पज्जति, पज्जन्ति इत्यादि ।

नट—नट्टति, नट्टन्ति आदि । ए के स्थान परकार के प्रयोग में
दोना में स्थान-परिवर्तन हो जाता है ।

तुस (तुप्)—तुस्सति, तुस्मन्ति आदि ।

मन—मञ्जति, मञ्जन्ति इत्यादि ।

सम (शम्)—सम्मति, सम्मन्ति इत्यादि । जन धातु के स्थान में संस्कृत के ममान ही जा आदेश होता है । जायते, जायन्ते आदि ।

दा धातु—दीयति, दीयन्ति आदि ।

जर (जृ)—जातु के रूप में विशेषता है—

जोष्यति, जाष्यन्ति । हिमो-हिमी के मत से जिन्थति, जिथ्यन्ति तथा विक्रम में जारति, जोरन्ति और जारति, जरन्ति आदिरूप होते हैं ।

रुधादिगण

संस्कृत में से यहाँ णम् त्रिवरण होने में छिनत्ति इत्यादि रूप होते हैं; पाली में छिन्दति, रुन्थि आदि रूप होते हैं । यहाँ 'म्' धादिगण के समान अकारात् धातु के अत में विकरण स्वरूप आता है, और धातु के पूर्व स्वर के अनंतर अनुस्वार होता है, और उस अनुस्वार का अने परवर्ती व्यजन के अनुमार परसवण होता है । जैसे—भिन्दति, रुन्धति, छिन्दति, मुञ्जति इत्यादि ।

रुधादिगण के विकरण में एक और विशेषता है । जहाँ अ विकरण कहा गया है, वहाँ इ ई ए तथा ओ भी विकरण स्वरूप प्रयुक्त हुए हैं । अतः इस गण की धातुओं के पाँच भिन्न-भिन्न प्रकार के रूप उपलब्ध होते हैं । यथा—

रुध

प्रथमपुरुष एकवचन—रुन्धति, रुन्धति, रुन्धीति, रुन्धेति, रुन्धोति ।

„ बहुवचन—रुन्धति, रुन्धन्ति, रुन्धेन्ति, रुन्धोन्ति ।

भिद्

„ भिन्दति, भिन्दति, भिन्दीति, भिन्देति, भिन्दोति आदि ।

छिन्द

प्रथमपुरुष छिन्दति, छिन्दति छिन्दति। छिन्दति छिन्दति छिन्दति।

भुञ्ज

भुञ्जति, भुञ्जति, भुञ्जति। भुञ्जति, भुञ्जति, भुञ्जति।

युञ्ज

युञ्जात, युञ्जति, युञ्जीति, युञ्जति, युञ्जति, युञ्जति।

स्वादिगण

स्वादिगण की धातुआ के अनन्तर माध्यागुत गु विरग्न होता है, पर किमी-किमी धातु में गा तथा उगा प्रत्यय भी दान हैं। गुग् होने में गु के स्थान में गा हो जाता है।

सु (श्रु) धातु

(क)

(१)

	एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
प्र०	सुगोति	सुगोन्ति	सुगाति	सुगन्ति
म०	सुगोसि	सुगाथ	सुगामि	सुगाथ
उ०	सुगोमि	सुगोम	सुगामि	सुगाम

हि धातु प्रायः प (प्र) पूर्वक—सुगोति, सुगन्ति, सुगाति, सुगन्ति।

पहिगन्ति इत्यादि।

वु (वृ) धातु—वुगोति, वुगाति, वुगन्ति इत्यादि।

कमी-कमी वगोति प्रयोग भी पाया जाता है।

मि—मिनोति, मिनाति, मिनन्ति आदि।

प पूर्वक अप (प्र आप्)

रसके रूप भी पापुणाति, पापुणन्ति तथा पापुणाति, पापुणाति इत्यादि होते हैं।

सक् (शक्) धातु

सकुणाति, सकुणन्ति इत्यादि। परन्तु ने स्थान में कुणाति इत्यादि।

क्रयादि गण

क्रयादिगण की धातुओं में ना प्रत्यय होता है, और धातु का आदि स्वर यदि दीर्घ हो, तो ह्रस्व हो जाता है ।

क्रो धातु

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	क्रियाति	क्रियन्ति
म०	क्रियासि	क्रियाथ
उ०	क्रियामि	क्रियाम

धू धातु—धुनाति, धुनन्ति इत्यादि ।

लू धातु—लुनाति, लुनन्ति इत्यादि ।

अस् (अश भक्षणे) धातु—अस्नाति, अस्नन्ति इत्यादि ।

जा—जा धातु के स्थान में जा आदेश होता है । यथा—जानाति, जानन्ति इत्यादि ।

गह—गृह्णाति, गृह्णन्ति, गृह्णति, गृह्णन्ति इत्यादि ।

तथा—घेयति, घेप्यन्ति इत्यादि रूप भी होते हैं ।

मा—मा धातु के आकार के स्थान में इकार होता है । यथा—मिनाति, मिनन्ति इत्यादि ।

तनादिगण

तनादिगण की धातुओं में उ प्रत्यय (विकरण) होता है । उ के स्थान में गुण हाने से ओ होता है ।

तन धातु

परस्मैपद

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	तनोति	तनोन्ति
म०	तनोसि	तनोथ
उ०	तनामि	तनोम

आन्मनेपठ

	एरुवचन	वदुवचन
प्र०	तनुते	तनुन्त
म०	तनुम	तनुंते
उ०	तन्व	तनुंते

कर (कृ) धातु

परम्भैपठ

	एरुवचन	वदुवचन
प्र०	करोति	करोन्ति, कुरुन्ति
म०	करोमि	करोथ
उ०	करोमि	करोम

आन्मनेपठ

प्र०	कुरुते	कुरुन्ते
म०	कुरुम	कुरुंते
उ०	कुरुं	कुरुंते

कर धातु से उत्तर विकल्प से प्रि प्रत्यय एता है, और उरुंते वं कर के रकार का लोप हो जाता है। यथा—करोति, करोन्ति, कयिरसि, कयिथ इत्यादि।

जुहोत्यादिगण

हु धातु

	एरुवचन	वदुवचन
प्र०	जुहोति, जुहति	जुहन्ति, जुहन्ति
म०	जुहोमि, जुहमि	जुहोथ, जुहथ
उ०	जुहोमि, जुहामि	जुहोम, जुहम

कभी-कभी जुहति, जुहन्ति इत्यादि रूप भी मिलते हैं।

हा धातु

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	जहाति	जहन्ति
म०	जहासि	जहाथ
उ०	जहामि	जहाम

दा धातु

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	ददाति, दज्जति, देति	ददन्ति, दज्जन्ति, देन्ति
म०	ददामि, दज्जसि, देसि	ददाथ, दज्जथ, देथ
उ०	ददामि, दज्जामि, देमि, दम्मि	ददाम, दज्जाम, देम, दम्म

घा धातु—दधाति, दधन्ति इत्यादि तथा विकल्पपक्षे मं घेति, घेन्ति इत्यादि ।

उपसर्ग सहित घा धातु के द्वित्व होने पर द्वितीय घ के स्थान में कमी-कमी ह होता है । यथा—पिदहति, पिदहन्ति इत्यादि । सहहति. (श्रद्धघाति), सहहन्ति ।

चुरादिगण

चुरादिगण की धातु में अय प्रत्यय होता है, और अय के स्थान में विकल्प से ए होता है ।

चुर धातु—चोरयति, चोरयन्ति, चोरेति, चोरेन्ति इत्यादि ।

चिन्त धातु—चिन्तयति, चिन्तेति, चिन्तयन्ति, चिन्तेन्ति आदि ।

गण धातु—गणयति, गणोति, गणयन्ति, गणोन्ति आदि ।

मत धातु—मतयति, मन्तेति इत्यादि ।

विद—वेदयति, वेदेति इत्यादि तथा वेदियति, वेदियन्ति आदि रूप भी पाए जाते हैं ।

घट—घाटयति, घाटेति, घटयति, घटेति आदि ।

लोट्लकार

भू धातु

अभ्मिपद

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	भवतु	भवन्तु
म०	भव, भवाहि	भवथ
उ०	भवाभि	भवाम

आत्मनेपद

प्र०	भवन	भवन्त
म०	भवम्तु	भवद्दी
उ०	भव	भवामन

भू धातु के स्थान में हू आदेश होने पर हंतु, हंतु, होंदि, दाथ हत्यादि रूप होंगे ।

ऊपर के उदाहरणों में स्पष्ट जागा कि लोट्लकार प्रायः मन्त्रों के ही समान पाली में भी जाता है । मन्त्र पुस्तक के एकवचन में संस्कृत में केवल भव जाता है, परन्तु पाली में हि वा लाय रिपन्त्य में होता है, और भवाहि रूप भी मिलता है । मन्त्रम पुस्तक के एकवचन में पाली में भवथ होता है ।

आत्मनेपद के रूप में विशेष अंतर है । उक्त पुस्तक में बहुवचन में भवामने रूप विशेष ज्ञान देने योग्य है ।

अस धातु

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अस्यु	असन्ति
म०	असि	असि
उ०	असि असि	असन्त, असन्त

अस धातु—अस्यु, असन्ति, असन्ति ।

दिस (दृश्) धातु—पस्सनु, टिस्सतु, दवखतु इत्यादि ।

ब्रु धातु

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	ब्रूतु	ब्रूवन्तु
म०	ब्रूहि	ब्रूथ
उ०	ब्रूमि	ब्रूम

आत्मनेपद में ब्रूतं, ब्रूवन्तं इत्यादि ।

दा धातु

परस्मैपद

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	ददातु	ददन्तु
म०	ददाहि	ददाथ
उ०	ददामि	ददाम

विकल्प से देतु, देन्तु ; दज्जतु, दज्जन्तु इत्यादि रूप होते हैं ।

आत्मनेपद

प्र०	ददता	ददन्त
म०	ददस्सु	ददव्हा
उ०	ददे	ददाममे

हु धातु—जुहोतु, जुहोन्तु जुहन्तु इत्यादि ।

कर (कृ) धातु

परस्मैपद

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	करोतु, कुरुतु	करोन्तु, कुव्वन्तु
म०	करोहि, कुरु	करोथ
उ०	करोमि	करोम

आत्मनेपद

प्र०	कुर्वन्	कुर्वन्
म०	कुर्वन्मु कुर्वन्तु	कुर्वन्तु
उ०	कुर्व्ये	कुर्व्यामहे

गृह (गृह)—गगृत्, गगृन्तु, गगृत्वाहि, गगृत्वा, गगृत्वाहि,
गगृहाम इति ।

जा (जा) परस्मैपद—प्र० जानातु, जानन्तु । म० जान, जानादि,
जानाथ । उ० जानामि, जानाम ।

आत्मनेपद—जानतं, जानन्त इत्यादि ।

विधिलिङ्

प्रत्यय

परस्मैपद

आत्मनेपद

	एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
प्र०	एद्य, ए	एद्युं	एद्य	एद्यं
म०	एद्यासि, ए	एद्याथ	एद्या	एद्याथ
उ०	एद्यामि, ए	एद्याम	एद्या, ए	एद्याम

भू धातु

परस्मैपद

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	भवेद्य भव	भवेद्य
म०	भवेद्यासि, भव	भवेद्याथ
उ०	भवेद्यामि, भवे	भवेद्याम

आत्मनेपद

प्र०	भवेद्य	भवेद्य
म०	भवथा	भवथाथ
उ०	भवेद्य, भवे	भवथाथ

भू धातु के स्थान में जब हू आदेश होता है, तब हुवेय्य, हुवेय्युं इत्यादि रूप होंगे। सर्वत्र भू के स्थान में हू हो जायगा। वैकल्पिक रूप हेय्य, हेय्युं, हेय्यासि, हेय्याथ, हेय्यामि, हेय्याम औः कहीं-कहीं हुवेय्यामि भी होते हैं।

गम धातु

परस्मैपद

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	गच्छेय्य, गच्छे	गच्छेय्युं
म०	गच्छेय्यासि, गच्छे	गच्छेय्याथ
उ०	गच्छेय्याम, गच्छे	गच्छेय्याम

इसी प्रकार गमेय्य, गमे, गमेय्युं इत्यादि।

आत्मनेपद

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	गच्छेय	गच्छेरं
म०	गच्छेथा	गच्छेयथहो
उ०	गच्छेय्यं, गच्छे	गच्छेयथाम्हो

वद प्रभृति धातुओं के रूप भी इसी प्रकार होंगे। केवल वद के स्थान में प्रथमपुरुष बहुवचन में वज्जु, वज्जुं तथा मध्यमपुरुष एकवचन में वज्जासि, वज्जेसि रूप भी होते हैं।

ठा (स्था) धातु

परस्मैपद

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	तिष्ठेय्य, ठेय्य	तिष्ठेय्युं, ठेय्युं
म०	तिष्ठेय्यासि, ठेय्यासि	तिष्ठेय्याथ
उ०	तिष्ठेय्यामि, ठेय्यामि	तिष्ठेय्याम, ठेय्याम

धा धातु

परमपद

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	दृश्य, दृष्ट	दृश्युः
म०	दृश्यामि	दृश्यामः
उ०	दृश्यामि	दृश्याम

इसी तरह देख्य देख्यु इत्यादि रूप भी पाते हैं। जब दा क स्थान में दृज्ज आदेश होता है, तब दृज्जेश्य, दृज्जे- दृश्यामि आदि रूप होते हैं।

प्रथम पुरुष के एकवचन में दृज्जा (दृशात्), बहुवचन में दृज्ज एव उत्तमपुरुष के एकवचन में दृज्ज (दशाम) पद भी होते हैं।

आत्मनेपद में दृश्य, दृशु इत्यादि रूप पाते हैं। तथा द्वि-तृ-च न होने पर देख्य, देख्युं, देख्याम आदि रूप भी पाते हैं।

धा धातु के रूप—दृश्य दृशे इत्यादि पाते हैं।

अपि उपसर्ग पूर्वक धा धातु के रूप पाते—दिश्र्य, दिश्रु आदि।

नोट—संस्कृत में भागुणि आचार्य के मत में दृश् प्रीय प्रार के अकार का लोप हो जाता है, यथा तदनुसार अश्रियान्, अश्रियान् आदि के स्थान में पिधान, वशाप्न आदि रूप होते हैं। अतः अतः से लोप नहीं होता। अतः प्रकाश का लोप शिबन्धन होता है। यही संस्कृत के प्रयोग या यानी पर पद प्रयोग पडा है।

दृ धातु—दृश्य, दृशे, दृशुं इत्यादि।

दा धातु—दृशेह, दृशे, दृशुं इत्यादि।

अस धातु (अदादिगणी)

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अस्स, सिया	अस्सु, सियुं
म०	अस्स	अस्सथ
उ०	अस्स	अस्साम

ब्रु धातु (परस्मैपद)

प्र०	ब्रु वेय्य, ब्रु वं	ब्रु वेय्युं
म०	ब्रु वेय्यासि	ब्रु वेय्याथ
उ०	ब्रु वेय्यामि	ब्रु नेय्याम

आत्मनेपठ मे ब्रु वेथ, ब्रु वेर मध्यम पुरुष ब्रु वेथो, ब्रु वेय्यब्हो, उत्तम पुरुष ब्रु वेय्य, ब्रु वे, ब्रु वेय्याम्हे रूढ होते हैं ।

तन धातु

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	तनेय्य, तने	तनेय्यु
म०	तनेय्यासि	तनेय्याथ
उ०	तनेय्यामि	तनेय्याम

कर धातु—कृ

परस्मैपद

(क)

प्र०	करेय्य, करे	करेय्युं
म०	करेय्यासि	करेय्याथ
उ०	करेय्यामि	करेय्याम

(ख)

(ग)

प्र०	कयिरा	कयिरुं	कुब्बेय्य, कुब्बे	कुब्बेय्युं
म०	कयिरासि	कयिराथ	कुब्बेय्यासि	कुब्बेथ
उ०	कयिरामि	कयिराम	कुब्बेय्य	कुब्बेय्याम

नोट—करेयु, कथिकं श्रौं कुञ्चेयुं के स्थान में यथाक्रम करेयुं, कथिकं श्रौं कुञ्चेय्य रूप हाते हैं तथा ग्य प्रणाली में यथाक्रम श्रौं उत्तम एवम् के एकवचनां में भी कथिग रूप हाता है। यह तुंगभील का मत है।

आत्मनेपद

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	कुञ्चेथ, कञ्चेथ, कथिगथ	कुञ्चं
म०	कुञ्चेथो	कुञ्चेथाम्
उ०	कुञ्चे, करे, करेद्य	कुञ्चेथां

की (क्री) धातु—क्रिगेय्य, क्रिगे, क्रिगेयुं इत्यादि ।
 गह (ग्रह) धातु— गणेर्य, गणेर, गणेर्युं इत्यादि ।
 जा (भा) धातु— जनेय्य, जान, जनेयुं इत्यादि ।
 इसके अतिरिक्त प्रथमपुरुष में जानिया, जना तथा जनेयाति

श्रौंर उत्तमपुरुष एकवचन में जानेम रूप भी होता है ।

- छिद्य धातु— छिदेय्य, छिदे, छिदेयुं इत्यादि ।
- या धातु— यायेय्य, यायेयुं इत्यादि ।
- नह (स्ना) न्हायेय्य, न्हायेयुं इत्यादि ।
- नि+वा— निव्यायेय्य, निव्यायेयुं इत्यादि ।

परोक्ष्वा (परोक्षा)— लिट्

प्रत्यय

	परस्मैपद		आत्मनेपद	
	एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अ	उ	न्थ	न्थे
म०	ए	त्थ	न्थो	न्थे
उ०	अ	म्	न्	न्

पाली में लिट् लकार का प्रयोग बहुत कम होता है। इस प्रकार संस्कृत में द्वित्व होता है, उन्मी प्रकार पाली में भी द्वित्व होता है।

पूर्ववती दीर्घ स्वर के स्थान में ह्रस्व, पूर्ववती कवर्ग के स्थान में चवर्ग, वर्ग के द्वितीय और चतुर्थ वर्ण के स्थान में क्रमशः प्रथम और तृतीय वर्ण तथा हकार के स्थान में जकार इत्यादि आदेश संस्कृत के ही अनुसार पाली में भी होते हैं। व्यजनादि प्रत्यय के परे धातु के अनन्तर हकार आगम होता है।

भू धातु

	परस्मैपद		आत्मनेपद	
	एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
प्र०	बभूव	बभूव	बभूवित्थ	बभूविरे
म०	बभूवे	बभूवित्थ	बभूवित्थो	बभूविब्धो
उ०	बभूव	बभूविम्ह	बभूवि	बभूविम्हे

पच धातु

	परस्मैपद		आत्मनेपद	
	एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
प्र०	पपच	पपचु	पपचित्थ	पपचिरे
म०	पपचे	पपचित्थ	पपचित्थो	पपचिब्धो
उ०	पपच	पपचिम्ह	पपचि	पपचिम्हे

जग धातु

प्र०	जगम, जगाम	जगमु	जगमित्थ	जगमिरे
म०	जगम	जगमित्थ	जगमित्थो	जगमिब्धो
उ०	जगम	जगमिम्ह	जगमि	जगमिम्हे

ब्रू धातु के प्रथमपुरुष एकवचन में आह तथा बहुवचन में आहु तथा आहसु—रूप होते हैं।

भविस्सन्ती (भविष्यन्ती) लृट्

इस लकार में संस्कृत के स्य के स्थान में स्स होता है, और प्रत्यय सब वचनमान के समान होते हैं।

	परस्मैपद	आत्मनेपद		
	एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
प्र०	स्मति	स्मन्ति	स्मन्	स्मन्ते
म०	स्मामि	स्मथ	स्मन्	स्मन्ते
उ०	स्मामि	स्माम	स्मं	स्मन्ते

किसी-किसी के मत में आत्मनेपद व प्रथम पुरुष व बहुवचन के सारे प्रत्यय भी देखा जाता है ।

लृट् लकार में धातुआ के वाढ प्रायः ४ होने हैं ।

भू धातु
परस्मैपद

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	भविस्सति	भविस्मन्ति
म०	भविस्मामि	भविस्मथ
उ०	भविस्मामि	भविस्माम

आत्मनेपद

प्र०	भविस्मते	भविस्मन्ते
म०	भविस्मम	भविस्मन्ते
उ०	भविस्म	भविस्माः

भू के स्थान में ह आदेश होने में निम्न-लिखित रूप होते हैं । (ह के उकार के स्थान में विरत्य में ए, एह शीर्ष श्रोत्र आदेश होने हैं, तथा उनके वाढ भविष्यत् के स्म विरग्न वा विरत्य में आर होता है ।)

	एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
	(क)		(ग)	

प्र०	तेति	तेन्ति	तेस्मति	तेस्मन्ति
म०	तेसि	तेथ	तेस्मामि	तेस्मथ
उ०	तेमि	तेम	तेस्मामि	तेस्माम

		(ग)		(घ)
प्र०	हेहिति	हेहन्ति	हेहिस्सति	हेहिस्सन्ति।
म०	हेहिसि	हेहिय	हेहिस्ससि	हेहिस्सथ
उ०	हेहामि	हेहाम	हेहिस्सामि	हेहिस्साम।
		(ङ)		(च)
प्र०	होहिति	होहन्ति	होहिस्सति	होहिस्सन्ति।
म०	होहिसि	होहिय	होहिस्ससि	होहिस्सथ
उ०	हाहामि	होहाम	होहिस्सामि	होहिस्साम

नोट—किसी-किसी के मत से उत्तम पुरुष एकवचन में हेआमि और होयामि तथा बहुवचन में हेआम और होआम रूप भी होते हैं ।

दिश (दृश) धातु

	एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
	(क)		(ख)	
प्र०	दक्खति	दक्खन्ति	दक्खिस्सति	दक्खिस्सन्ति।
म०	दक्खसि	दक्खथ	दक्खिस्ससि	दक्खिस्सथ
उ०	दक्खामि	दक्खाम	दक्खिस्सामि	दक्खिस्साम
	(ग)		(घ)	
प्र०	दक्खति	दक्खन्ति	पस्सिस्सति	पस्सिस्सन्ति।
म०	दक्खसि	दक्खथ	पस्सिस्ससि	पस्सिस्सथ
उ०	दक्खामि	दक्खामि	पस्सिस्सामि	पस्सिस्साम

सक धातु

सक्खिस्सति, सक्खिस्सन्ति आदि परस्मैपद ।

सक्खते, सक्खन्ते इत्यादि आत्मनेपद ।

वच—वक्खति, वक्खन्ति इत्यादि ।

मुच—मोक्खति, मोक्खन्ति इत्यादि । ✓

भुज—भोज्स्वति, भोज्स्वन्ति इत्यादि ।

वम—वञ्जति, वञ्जन्ति ।

रुद—रुञ्जति, रोदिस्वति, रुञ्जन्ति, रोदिस्वन्ति ।

लभ—लञ्जति, लभिस्वति, लञ्जन्ति, लभिस्वन्ति ।

गम—गञ्जिस्वति, गमिस्वति, गञ्जिस्वन्ति, गमिस्वन्ति ।

छिद—छेञ्जति, छिन्दिस्वति, छेञ्जन्ति, छिन्दिस्वन्ति ।

रुध—रुन्धिस्वति, रुन्धिस्वन्ति ।

जन—जायिस्वति, जनिस्वति, जायिस्वन्ति, जनिस्वन्ति ।

जा (जा)—जस्वति, जानिस्वति, जस्वन्ति, जानिस्वन्ति ।

जि—जेस्वति, जिनिस्वति, जेस्वन्ति, जिनिस्वन्ति ।

क्री (क्री)—क्रेस्वति, क्रिगिस्वति, क्रेस्वन्ति, क्रिगिस्वन्ति ।

मु (भ्रु)—मोस्वति, मुगिस्वति, मोस्वन्ति, मुगिस्वन्ति । ✓

गह (ग्रह)—गशिस्वति, गहेस्वति, गशिस्वन्ति, गहेस्वन्ति । ✓

दा—दस्वति, ददिस्वति, दञ्जिस्वति, दस्वन्ति, ददिस्वन्ति, दञ्जिस्वन्ति । ✓

धा—धस्वति ।

अपि उपमर्ग सहित—पिदिस्वति ।

परि पूर्वक—परिदहेस्वति ।

इ (गर्त)—एस्वति, एस्वन्ति ।

जर—जीरिस्वति, जीरिस्वन्ति ।

मर—मरिस्वति, मरिस्वन्ति ।

कर (कृ)—करिस्वति, करिस्वन्ति ।

तथा

प्र०	वाटति	वाटन्ति
म०	वाटमि	वाटन्मि
उ०	काटामि	काटन्मि

तथा

काहित्ति, काहित्ति इत्यादि इकार महित भी रूप होते हैं ।
नह (स्ना) नहायिस्सति, नहायिस्मन्ति । परि+नि+वा धातु—
परिनिव्वायिस्सति, परिनिव्वायिस्सन्ति ।

आत्मनेपद—उत्तमपुरुष एकवचन परिनिव्विस्स ।

कालातिपत्ति (कालातिपत्तिः) लृङ्
प्रत्ययगण

परस्मैपद		आत्मनेपद	
एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
प्र० स्सा	स्ससु	स्सथ	स्सिसु
म० स्से	स्सथ	स्समे	स्सब्हे
उ० स्स	स्सम्हा	स्स	स्साम्हसे

कभी-कभी परस्मैपद प्रथमपुरुष एकवचन स्सा तथा मध्यम पुरुष एकवचन स्से के स्थान में स्म होता है । एव उत्तम पुरुष बहुवचन स्सम्हा के स्थान में स्सम्ह भी होता है ।

संस्कृत के मटश पाली में भी लृङ् लकार में धातु में पूर्व अकार का आगम होता है । परंतु कहीं-कहीं उसका लोप भी देखा जाता है । अन्य सब कार्य लृट् के समान होते हैं ।

भू धातु
परस्मैपद

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अभविस्सा, अभविस्स	अभविस्ससु
म०	अभविस्से, अभविस्स	अभविस्सथ
उ०	अभविस्स	अभविस्सम्हा, अभविस्सम्ह

अकार के लोप होने पर भविस्म, भविस्ससु आदि रूप होंगे ।

श्रात्मनेपद

प्र०	अभविस्मि	अभविस्मिन्
म०	अभविस्मसे	अभविस्मसे
उ०	अभविस्म	अभविस्माग्ने

गम धातु

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अगच्छिस्मा, अगच्छिस्म	अगच्छिस्मन्
म०	अगच्छिस्मसे, अगच्छिस्मसे	अगच्छिस्मसे
उ०	अगच्छिस्म	अगच्छिस्मग्हा

अन्यान्य धातुश्चा के रूप भी इमी प्रकार हीने । तथा -

पच धातु

परस्मैपद

श्रात्मनेपद

	एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अपचिस्मा	अपचिस्मि	अपचिस्मिन्	अपचिस्मिन्
म०	अपचिस्मसे	अपचिस्मसे	अपचिस्मसे	अपचिस्मसे
उ०	अपचिस्म	अपचिस्मग्हा	अपचिस्मग्हा	अपचिस्मग्हा

परस्मैपद—प्रथम और म यम पुरुष एकवचन में क्रमशः अपचि-

स्मिति और अपचिस्मिस्ति रूप भी होते हैं ।

हीयत्तनी (ह्यत्तनी) लट्

प्रत्यय

परस्मैपद

श्रात्मनेपद

	एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
प्र०	आ, अ	ऊ, उ	त्थ, थ	थ
म०	आ, अ	त्थ	त्थे	त्थे
उ०	अ, अ	ग्हा	त्थे	त्थे

लट् लकार—परस्मैपद में कर्मा-रभी प्रथमपुरुष एतदपचने

आ के स्थान में अ, बहुवचन ऊ के स्थान में उ और ङं, मध्यम-पुरुष एकवचन ओ के स्थान में अ, तथा उत्तमपुरुष एकवचन अ के स्थान में अं भी होते हैं। ये रूप बहुत कम पाए जाते हैं।

लड् लकार में भी धातु में पूर्व अकार आगम होता है। कमी-कमी इस अकार का लोप भी होता है।

भू धातु

परस्मैपद

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अभवा, अभव	अभवृ, अभवं
म०	अभवा	अभवत्थ
उ०	अभव, अभवं	अभवम्हा

आत्मनेपद

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अभवत्थ	अभवत्थु
म०	अभवसे	अभवहं
उ०	अभवि	अभवम्हमे

भू धातु के स्थान में हू आदेश होने पर ये रूप हंगे—

परस्मैपद

आत्मनेपद

	एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अहुवा	अहुव्र अहुशु	अहुवत्थ	अहुवत्थुं
म०	अहुवो	अहुवत्थ	अहुवमे	अहुवहं
उ०	अहुवं	अहुवम्हा	अहुवि	अहुवम्हसे

पच धातु

परस्मैपद

आत्मनेपद

	एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अपचा	अपचू	अपचत्थ	अपचत्थुं

	एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
म०	अपचां	अपचत्थ	अपचमे	अपचन्
उ०	अपच, अपच	अपचन्टा	अपचि	अपचन्ः

गम धातु
परस्मैपद

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अगच्छा, अगमा	अगन्तु अगन्
म०	अगच्छा, अगमा	अगन्तुथ, अगमन्थ
उ०	अगच्छ, अगच्छ, अगम, अगम	अगन्तुः, अगमन्ः

आत्मनेपद

प्र०	अगच्छत्थ, अगमन्थ	अगन्तुं, अगमन्
म०	अगच्छमे, अगमन्मे	अगन्तुन्, अगमन्
उ०	अगच्छि, अगमि	अगन्तुमने, अगमन्ः

दिस धातु (दृग्) प्रथमपुरुष एकवचन अदमा अयदा
अदिस्वा ; उत्तमपुरुष एकवचन अदम, अदम ।

वच धातु

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अवचा, प्रवच	अवन्, प्रवन्
म०	अवचां, अवच	अवचन्
उ०	अवच, प्रवच	अवचन्ः

ब्रू धातु—अब्रू वा, अब्रूतु इत्यादि ।

कर धातु

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अकरा, अका	अकर
म०	अकरो	अकरन्थ, अकरो
उ०	अकर, अक	अकरन्ः, अकरो

आत्मनेपद—प्रथमपुरुष एकवचन अकरस्थ, बहुवचन अकरत्थु ;
मध्यमपुरुष एकवचन अकरमे, बहुवचन अकरव्ह , उत्तमपुरुष
एकवचन अकरि, बहुवचन अकरम्हसे ।

दा धातु

$\left. \begin{matrix} \text{दा} \\ \text{धातु} \end{matrix} \right\}$

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अददा	अददुं
म०	अददो	अददित्थ
उ०	अदद	अददम्हा

इमे विकल्प मे द्वित्व होता है ; द्वित्व न होने के पक्ष में ये रूप
होंगे—

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अदा	अदुं
म०	अदो	अदित्थ
उ०	अद	अदम्ह

आत्मनेपद

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अददत्थ	अददत्थुं
म०	अददमे	अददव्ह
उ०	अददिं	अददम्हसे

अञ्जतनी (अद्यतनी)

पाली में भूतकाल-मात्र को द्योतित करने के लिये प्रायः लुङ् का ही प्रयोग किया जाता है । यही कारण है कि पाली भाषा में जिस प्रचुरता से लुङ् का प्रयोग पाया जाता है, उस प्रकार अन्य किसी भाषा में नहीं मिलता । संस्कृत में भूतकाल के लिये लङ्, लिट् और लुङ् तीन लकार हैं । पाली में लिट् का प्रयोग तो प्रायः नहीं के बराबर है । लङ् का प्रयोग भी विरल है । अनेक स्थलों में लङ् और

लुट् प्रायः मिल-मे गए हैं। इगलिये भूतकाल का भाग मरना लुट् को ही निर्वहन करना पड़ता है। मस्कृत में लुट् प्रथम कृति है। च्लि का लोप, वस, अड्, चड् इत्यादि प्रभेदा न उनके प्रथम प्राय हैं। पाली में भी मस्कृत का प्रभाव पड़ा ही है। अत्र इगलिये का सामान्यतः नहीं, तो विशेष स्थलों में अवश्य ही मस्कृत का भाग अनुसार तारतम्य देखा जाता है।

विभक्ति

	परस्मैपद	प्रान्मनेपद
	एकवचन	बहुवचन
प्र०	ई, इ	उ, उन्, इमं प्रा. इत्थ
म०	आ, इ	न्थ मे
उ०	ए	महा, गह अ, अ मे

व्यजनादि विभक्ति के परे धातु ने उत्तर प्रायः उकार आगम होता है।

धातु से पूर्व विकल्प में अ वा आगम होना है। परस्मैपद में कभी-कभी स्वरत्त धातु ने पर निम्न-निम्नित विभक्ति मिली है ही ने माधारण लुट् का पद बन जाता है-

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	मि	मं
म०	सि	मन्थ
उ०	मि	मिगहा, मिगः

व्यजनात् धातु से उत्तर कभी-कभी ये सब विभक्तिग पद जाते हैं।

भू धातु
परस्मैपद

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अभवी, अभधि	अभन्, अभन्ति

	एकवचन	बहुवचन
म०	अभवो, अभवि	अभवित्थ
उ०	अभवि	- अभविम्हा, अभविम्ह
आत्मनेपद		
प्र०	अभवा, अभवित्थ	अभवृ
म०	अभविसे	अभविष्हे
उ०	अभव, अभव	अभविम्हे

आदि में अकार का आगम विकल्प से होता है। उसके अभाव में मवी, मवि, मवुं, भविसुं इत्यादि रूप होंगे।

भू के स्थान में हू होने से इस प्रकार रूप होंगे।

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अहोसि, अहू	अहेसुं, अहवुं
म०	अहोसि	अहोसित्थ
उ०	अहोसि, अहुं	अहोसिम्ह, अहुम्ह

पच धातु

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अपची, अपचि	अपचुं, अपचिसु
म०	अपचो, अपचि	अपचित्थ
उ०	अपचिं	अपचिम्हा, अपचिम्ह

गम धातु

	एकवचन	बहुवचन
(क)		
प्र०	अगच्छि	अगच्छुं, अगच्छिसु
म०	अगच्छो, अगच्छि	अगच्छित्थ
उ०	अगच्छि	अगच्छिम्हा, अगच्छिम्ह

(ग)

प्र०	अगमी, अगमि, अगमामि	अगम्, अगमिन्, अगमिन्
म०	अगमो, अगमि	अगमिन्, अगमिन्
उ०	अगमि	अगमिन्, अगमिन्, अगमिन्

अग (ग)

प्र०	अगच्छि	अगच्छुः, अगच्छिन्
म०	अगच्छो, अगच्छि	अगच्छिन्
उ०	अगच्छि	अगच्छिन्, अगच्छिन्

(घ)

लुट् लकार में गम धातु के स्थान में विकल्प में गा अर्थात् प्रग है, उस टगा में इसके रूप इस प्रकार होते हैं—

परस्मैपद

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अगा	अगं
म०	अगा	अगन्
उ०	अग	अगन्ते

लभ धातु—इसके प्रथम श्रोत्र उत्तम पुरुष व बहुवचन के प्रत्ययों के स्थान में विकल्प में लभ, लभि शोभ, लोभ होते हैं। यथा—

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अलत्थ, अलभि	अलत्थिन्, अलत्थि
म०	अलभि	अलत्थिन्
उ०	अलत्थं, अलभि	अलत्थिन्

दिश (दृश्)

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अपस्ती, अपस्मि	अपस्मिन्

	एकवचन	बहुवचन
म०	अपस्मि	अपस्मित्थ
उ०	अपस्मिं	अपस्मिम्ह

पस्म आदेश न होने पर ये रूप होंगे—

प्र०	अहक्खि	अहक्खिसु, अहक्खं
म०	अहक्खसि	अहक्खसुं
उ०	अहक्खसिं	अहक्खसुं, अहक्खं

सक (शक्) धातु

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	असक्खि	असक्खिसु
म०	असक्खि	असक्खित्थ
उ०	असक्खिं	असक्खिम्ह

कुश (कृश) धातु

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अक्कोसि, अक्कोच्छि	अक्कोसिसु, अक्कोच्छिसु
म०	अक्कोसि, अक्कोच्छि	अक्कोसित्थ, अक्कोच्छित्थ
उ०	अक्कोसिं	अक्कोसिम्ह

गह (ग्रह) धातु

एकवचन

बहुवचन

प्र०	अगग्गिह, अगग्गिहि, अगग्गिहसि	अगग्गिहसु अगग्गिहिसु, अगग्गिहंसुं
म०	अगग्गिह, अगग्गिहि, अगग्गिहसि	अगग्गिहित्थ, अगग्गिहित्थ, अगग्गिहित्थ
उ०	अगग्गिह, अगग्गिहि, अगग्गिहसिं	अगग्गिहम्ह, अगग्गिहिम्ह, अगग्गिहम्ह

रुघ धातु—अरुन्धि, अरुन्धिमु इत्यादि ।

छिद—अच्छिन्दि, अच्छिन्दिंसु ।

तथा अच्छिज्जि, अच्छिज्जिसु ।

नि + सट् वातु—निमीडि निमीडिम्, निमि डिम ।
 माम (भाप)—ग्रमामि ग्रमामिम् ।

अस धातु (अडादिगणौ)

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	आमि	आमं प्र मिनु
म०	आमि	आमिन्
उ०	आमि	आमिन्

वच धातु

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अवाच	अवाचं, अवाचु
म०	अवाचो	अवाचन्
उ०	अवाचि	अवाचुम्

ब्रू धातु—अब्रू वी, अब्रू वि
 हन—अवधि, अहनि
 हा—प्रज ासि, अजडि
 दा—अददि, अदजि, अदामि
 अददं, अददिम् अददिन्, अददुम् ।

भ—अधासि अन्नु इत्यादि ।
 पि + धा—पिददि पिददिम् इत्यादि ।
 ठा धातु—अष्टामि अष्टम् इत्यादि ।
 सं + ठा—संशठहि संशठदिम् इत्यादि ।
 पा—अपिधि, अपामि अपिधिन्, अपदुम् ।
 जा (जा)—अजानि, अजामि अजानिम् अजामिम् ।
 जि—अजिनि, अजेमि अजिनिम्, अजेमिम् ।
 हि—अहिणि अहिणिम् ।
 प + हि—पादेसि पादेसिम् ।

Sum

प+आप (प्राप्)—पापुणि	पापुणिसु ।
नी—अनयि	अनयिसु ।
हु—अजुब्धि, अजुहोसि	अजुब्धिसु, अजुहोसु ।

क (कृ) धातु

एकवचन

बहुवचन

(क)

प्र०	अकरि	अकरिसु, अकसु, अकर-
म०	अकरि	अकरित्थ
उ०	अकरि	अकरिम्ह

(ख)

प्र०	अकासि	अकामुं
म०	अका	अकासिस्थ
उ०	अकासि	अकासिम्ह

आत्मनेपद

प्र०	अकासित्थ	अकासु
म०	अकासिमे	अकासिब्हे
उ०	अकासुं	अकासिम्हे

चुगादिगणी धातुओं के तथा णिजत धातुओं के लुङ् के रूप करने में अय् के स्थान में ए हो जायगा और फिर लुङ् के प्रत्यय होंगे । यथा—

चुरं धातु

एकवचन

बहुवचन

प्र०	अचोरेसि	अचोरेसुं
म०	अचोरेसि	अचोरेसित्थ
उ०	अचोरेसि	अचोरेसिम्ह

मन्त धातु

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अमन्तेसि	अमन्तेमं
म०	अमन्तेमि	अमन्तेमिन्थ
उ०	अमन्तेमि	अमन्तेमिग्द

उप + नम (णिजन्त)

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	उपनामंति	उपनामं
म०	उपनामंमि	उपनामंमिन्थ
उ०	उपनामंमि	उपनामंमिग्द

भू (णिजन्त)

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	भावेसि	भावेमं
म०	भावेमि	भावेमिन्थ
उ०	भावेमि	भावेमिग्द

णिजन्त

संस्कृत में प्रेरणार्थक धातुओं में णिच् प्रत्यय होता है। यानी में भी अय और आपय प्रत्यय होते हैं। इन प्रत्ययों के बाद धातु में यथासंभव गुण और वृद्धि होते हैं। मन्त के णिच् के स्थान में भी अय होता है, उसके अनुसार पाली में अय होता है। संस्कृत में कुछ णिजन्त धातुओं को (मन्, उ, उपनाम, भावे आदि) पुक् आगम होता है, और तदनुसार अय, अपय, ह्यपयति, दापयति आदि रूप होते हैं। यानी में उ, उपनाम के अनुकरण में प्रायः सर्वत्र ही वकल्पिक अय, अपय, ह्यपयति होता है।

कर धातु

एकवचन

बहुवचन

(क)

प्र०	कारयति	कारयन्ति
म०	कारयसि	कारयथ
उ०	कारयामि	कारयाम

(ख)

प्र०	कारापयति	कारापयन्ति
म०	कारापयसि	कारापयथ
उ०	कारापयामि	कारापयाम

जैसा कि पूर्व में कहा गया है, पदात्तर्गत अय के स्थान में कभी-कभी ए हो जाता है, तदनुसार शिजन्त में जब अय के स्थान में ए और आपय के स्थान में आपे हो जायेंगे, तो दो प्रकार के रूप और होंगे । यथा—

एकवचन

बहुवचन

(ग)

प्र०	कारेति	कारेन्ति
म०	कारेसि	कारेथ
उ०	कारेमि	कारेम

(घ)

प्र०	कारापेति	कारापेन्ति
म०	कारापेसि	कारापेथ
उ०	कारापेमि	कारापेम

अन्यान्य लकार भी इसी प्रकार होंगे ।

पच धातु—पाचयति, पाचेति, पाचापयति, पाचापेति ।

गृह—गृहयति, गृहेति ।

द्रुम—द्रुसयति, द्रुमेति ।

गम—गमयति, गामयति, गानंति, गच्छापयति, गच्छापेति ।

सम—समयति, समंति ।

जन—जनयति, जनेति ।

नियम—नियामयति, नियामेति ।

घट—घटयति, घटेति, घटापयति, घटापेति ।

बुध—बोधयति, बोधेति, बुद्ध्वापयति, बुद्ध्वापेति ।

गह—(ग्रह)—ग्राहयति, ग्राहेति, गाहापयति, गाहापेति, ।

गणहापयति, गणहापेति ।

हा—जहापयति, जहापेति, हापयति, हापेति ।

दा—दापयति, दापेति ।

अपि+वा—पिधापयति, पिधापेति, पिदहापयति, पिदहापेति ।

हु—जुहापयति, जुहापेति, जुहावेति ।

सु (श्रु)—सावयति, सावेति ।

जि—जयापयति, जयापेति ।

चुर—चोरापयति, चोरापेति ।

चिन्त—चिन्तापयति, चिन्तापेति ।

सन्न व

क्रिमी क्रिया की इच्छा होने पर—इच्छा एक मन् प्रत्यय भाव के बाद होता है । जुहात्त्यादि गण के समान मन के पर द्वि-वादि भाव होने हैं । यहाँ यह स्मरण रखना चाहिए कि कर्ता क्रिया की इच्छा करने लिये करेगा सभी सन् हागा । अन्य के लिये क्रिया की इच्छा करने म सन् न होगा । जैसे गाविद. पिपासति—अथान् गोविद पाने की इच्छा स्वय करता है और यदि अन्य कोई लिए इस वचन की इच्छा गाविद करे, तो 'पिपासति' यह प्रयोग न होगा । सन् व. पर द्वित्य होने पर पूर्वनिर्दिष्ट ह्रस्व, दीर्घ, संधि-कार्य आदि १५ मन्व होने । पाने

सन्
वचन
आदि

वापेति

सन्नत के रूप किस प्रकार संस्कृत-सन्नत का अनुकरण करते हैं, इसका पता निम्न-लिखित तुलना से ज्ञात होगा। यथार्थ में पाली में स्वतंत्र रूप में सन्नत की उत्पत्ति प्रतीत नहीं होती, प्रत्युत संस्कृत-सन्नत रूप से ही, आवश्यक परिवर्तन के अनंतर, पाली सन्नत तैयार होता है। यह बात नहीं है कि पाली में सन्नत का प्रयोग अत्यंत विरल है; परंतु जितनी स्वतंत्रता से अन्य रूप पाली में हैं, उतनी स्वतंत्रता इसमें नहीं है, और फलतः पाली के सन्नत को संस्कृत के सन्नत का पूर्ण रूप में मुलापेक्षी होना पड़ता है। जिन धातुओं से (तितक्षति प्रभृति) संस्कृत में स्वार्थ में सन् होता है, उन्हीं धातुओं से पाली में भी स्वार्थ में सन् होता है।

	संस्कृत-सन्नत	पाली
भुज् धातु	बुभुक्षति	बुभुक्खति
घम् (अद्)	जिघत्सति	जिघच्छति
श्रु	शुश्रूषति (ते)	सुसूमति
पा	पिपासति	पिवासति
जि	जिगीपति	जिगिसति
हृ	जिहीर्षति	जिगिमति

जि और हृ (हर), दोनों के स्थान में पाली में गि आदेश होता है। स्वार्थ में सन् नीचे लिखी धातुओं से होता है—

तिज्	तितिक्षति (ते)	तितिक्खति
गुप्	जुगुप्सति (ते)	जिगुच्छति
कित्	चिकित्सति	चिकिच्छति, तिक्किच्छति
मान्	मीमासते	मीमंसते

सन्नत धातु से णिच् होने पर भी पूर्ववत् अय् और आपय् होंगे। यथा—

तिज्—तितिक्खयति, तितिक्खापयति

किन्—तिकिञ्छति, तिकिञ्छेति, तिकिञ्छ्यापति, तिकिञ्छापेति
 भुञ्—बुभुवत्यति, बुभुव्यापयति

यङ्ङुत और यङ्ङुगत

क्रिया का वाग-वाग होना अथवा अतिगय होना, इन गंतित करने के लिये संस्कृत में यङ् तथा यङ्ङुत् होना है। भूयुत विभु-शेखर भट्टाचार्य लिखते हैं कि 'पाली-व्याकरण में कम मन्थ में विशेष सूत्र न देखे जाने पर भी तत्पद्य कुछ प्रयोग देखे जाते हैं।' यथार्थ में जहाँ विशेष सूत्र उपलब्ध होने भी हैं वहाँ भी प्रायः संस्कृत के रूपों में ही परिवर्तन होकर पाली रूप दिखाए देना है। मूल धातु से पाली में इन रूपों का मित्र क्रमात्ताहन होगा।

कुछ उदाहरण उद्धृत किए जाते हैं—

ज्वल धातु पाली में दल हो जाती है। अतः पानी में टाटागति रूप होता है—संस्कृत में—जाज्वल्यति (ते)।

कम (कम—पाली)--म०—चङ्कमीति

पाली—चङ्कमति

गम—

सं०—जङ्गमीति

पाली—जङ्गमति

चल—

म०—चञ्चलीति

पाली—चञ्चलति

लप—

म०—लालप्यति (ते) लालपीति

पाली—लालप्यति, लालपति

नाम धातु

नाम (सजा) में तद्वत् आचरण करने में जो क्रियाएँ बनती हैं, वे नाम धातु कहलाती हैं। इस प्रकार के नियम पाली में प्रायः संस्कृत के समान होते हैं—

पर्वत (पर्वत) के समान हो जाना=पर्ववायति

समुद्र " " " =समुद्रायति

धूम " " " =धूमायति

ये उदाहरण हुए जब उपमान कर्ता था—समुद्र इव आचरति इत्यादि ।

परंतु जब उपमान कर्म होगा, अर्थात् पुत्रमिव आचरति शिष्यः=पुत्रीयति; पुत्र=पुत्रीयति; छत्त=छत्तीयति ।

अपनी निजी इच्छा क्रिमी वस्तु के प्राप्त करने के लिये होने पर इच्छार्थक धातु के कर्मभूत शब्द से उत्तर ईय होता है ।

अत्तनो पत्तं (पात्रं) इच्छति=पत्तीयति ।

अत्तनो वत्थं (वस्त्र) इच्छति=वत्तीयति ।

चीवग्=चीवरीयति ।

पट=पटीयति ।

पुत्त=पुत्तीयति इत्यादि ।

दलह करोति = दलयति, पमाणं करोति = पमाणयति आदि प्रयोग सकृस्त के समान होते हैं ।

कर्म और भाववाच्य

संस्कृत के समान पाली में भी क्रियाओं में कर्मवाच्य, भाववाच्य और कर्मकर्तृवाच्य प्रत्यय होते हैं । कर्म की प्रधानता रहने से—अभिहित होने पर—जब वह प्रथमा में होता है, तब क्रिया में कर्मवाच्य प्रत्यय होते हैं—जैसे देवदत्त अन्न पकाता है; जब अन्न अभिहित होकर प्रथमा में होगा, तब यह रूप होगा—अन्न देवदत्त से पकाया जाता है । यह कर्मवाच्य सकर्मक धातुओं में होता है । अकर्मक धातुओं में जब केवल भाव अर्थात् क्रिया-मात्र द्योतित करना अभीष्ट होता है, उस समय कर्ता अग्रधान-हो जाता है—जैसे मैं सोता हूँ, मुझसे सोया जाता है । कमी-कमी कर्म ही कर्ता के रूप में आकर क्रिया करता है । इस प्रकार

के प्रयोग को कर्मकर्तृ प्रयोग कहते हैं—जैसे चावल पचना है मक्का चलता है आदि । संस्कृत के अनुमात्र पाली में भी इन तीनों प्रकारों में यकार होता है. श्रीर फिर माधारण कत्य के नियमों के अनुमात्र यथामभव संधिकार्य आदि होते हैं । पाली में, संस्कृत में भिन्न—कर्म श्रीर भाववाच्य परस्मैपद श्रीर आत्मनेपद, दोनों पदों में प्रयुक्त होते हैं ।

यथा—पच्यते—पचते, पचति ।

बुध्यते—बुद्भक्ते, बुद्भक्ति ।

उच्यते—उच्यते, उच्यति ,

बुध्यते, बुध्यति ।

य प्रत्यय होने पर ममी धातुश्रीर ने परे विभक्ति श्रीर यकार में पूर्व इकार आगम होता है । यथा—

तुस् धातु (तुप्)—तुस्मते, तुमियति ।

पुच्छ (पृच्छ)—पुच्छते, पुच्छयति ।

दंस (दंश) दस्मते; दमियति ।

भञ्ज—भञ्जते, भञ्जियति ।

मुप (म्वप)—मुपते, मुपियते ।

नन्द—नन्दियते ।

मह—महीयति ।

मथ—मथीयति ।

निम्न-लिखित का भी ध्यान देने योग्य है—

इ धातु—इयते; इ—इयते : स्—इयते ।

भू—भूयते; लू—लूयते; पू—पूयते ।

जन—जायते, जज्यते; तन—तायते, तज्यते ।

वद—उच्यते, उच्यति; यज—इज्यते, वच—उच्यते, उच्यति ।

इम (इप)—इमते, इमति, पनीयति, इन्दीयति ।

दिस (दृश)—दिस्सति, पस्सीयति, दव्वखीयति ।

यम—यमीयति, यच्छीयति ।

गम—गच्छीयति, गच्छीयते ।

वद—वज्जीयति, वदीयति ।

नि + मद—निसज्जते ।

दा—दीयते; पा—पीयते, ठा—ठीयते,

मा—मायते, हा—हीयते; धा—धीयते ।

कर—करीयति, करिय्यति, करिय्यते, कयिरति, कय्यति ।

जर—जीरीयति, जीय्यति ।

चुर—चोरियति ।

चिन्त—चिन्तयति ।

भू—शुचि-कर्मवाच्य—भावीयति ।

अन्यान्य लकार यथानियम विभक्ति (प्रत्यय) आदि के योग से होंगे । उदाहरणार्थ पच धातु के रूप भिन्न-भिन्न लकारों में दिए जाते हैं ।

पच धातु

प्रथमपुरुष

	परस्मैपद		आत्मनेपद	
	एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
लट्	पचति	पचन्ति	पचते	पचन्ते
विधिलिट्	पच्चे, पच्चेत्थ	पच्चेय्युं	पच्चेय	पच्चेरं
लोट्	पच्चतु	पच्चन्तु	पच्चतं	पच्चन्तं
लङ्	अपच्चा	अपच्चु	अपच्चत्थ,	अपच्चथ, अपच्चत्थुं
लिट्	पपच्च	पपच्चु	पपच्चित्थ	पपच्चिरे
लृट्	पच्चिस्सति	पच्चिस्सन्ति,	पच्चिस्सते	पच्चिस्सन्ते

	एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
लृट्	अपचिस्ता,	अपचिस्मनु,	अपचिस्मथ	अपचिस्मिन्मु
	अपचिस्म	अपचिमु		
लुट्	अपचि,	अपचिमु	अपचिन्थ	अपचन्
	पचि	पचिमु	पचिन्थ	पचन्

भू धातु—णिजंत-कर्मधाञ्य

प्रथमपुरुष

परस्मैपद

आत्मनेपद

	एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
लृट्	भावीयति	भावीयन्ति	भावीयते	भावीयन्ते
विधि०	भावीयन्थ	भावीयन्थुं	भावीयथ	भावीयथं
लोट्	भावीयतु	भावीयन्तु	भावीयत	भावीयन्त
लृट्	अभावीया	अभावीयु	अभावीयथ	अभावीयथं
लृट्	भावीयिस्मति	भावीयिस्मन्ति	भावीयिस्मते	भावीयिस्मन्त
लृट्	अभावीयिस्ता	अभावीयिस्तंमु	अभावीयिस्मथ	अभावीयिस्मिन्मु
लुट्	अभावीयि	अभावीयिमु	अभावीयिन्थ	अभावीयन्

अव्यय

सङ्कृत के समान पाली में भी उरमगो की बहुलता है। धातु के सयोग में उनमें तथा परिवर्तन होता है। यह पूर्व में लिखा जा चुका है। यहाँ केवल उनका परिगणन-मात्र किया जाता है।

प्र	प	पवता (प्रवत्.)	अपवृद्धो (अपवृद्धः)
परा		पराजितो,	पराभ्रा
अप		अपमानो,	अपेवं
गम्		गमामा,	गन्धि
अनु		अनुमतो,	अनुवदते, अनुवदन्ति

अव निस निर् }	अवत्था नी	श्रोतरण, श्रोवारो निग्गतो, निम्भरो, नीहरणं, नीहारो
दुम दुग् }		दुग्गमं, दूहारः
वि अङ्		विवट्टो, विचित्तं, वीतिहारो, वीतिक्रमो आवासो, अक्कोसो (आक्रोशः), अञ्ज (आजातः)
नि अधि अपि अति सु उत् अभि प्रति परि उप		अधिसीलो, अज्झायो (अध्यायः) अपिधानं अतीतो, अच्चन्तं (अत्यन्तं) सुगहीतो, उग्गच्छति, उपन्नो अब्भागमनं (अभ्यागमनं), अब्भन्तर पति पटिबट्टो, पतिरूप, पच्चेकं, पटिभानं परि पखितो, परियादान (पर्यादानं), पयिर पासति (पयंपासति) उपसग्गो, उपेक्खा
किं		सर्वनाम घटित अव्यय— कुहिं, कुहिञ्चनं, कुहं, कह, क, कुत्र, कुत्थ, कत्थ, किस्सिच्चि
तत्		तहि, तह, तत्र, तत्थ
यत्		यहि, यत्र, यत्थ
इदम्		इह, इध
एतद्		अत्र, अत्थ, एत्थ

सर्व	सर्वत्र, सर्वत्रय, सर्वत्रि
पर	परत्र, परन्त्र
अन्य	अज्जत्र, अज्जन्त्र
इतर	इतरत्र, इतरन्त्र
अदम्	अमुत्र, अनुत्र

संस्कृत में जिस प्रकार पञ्चमी, षष्ठमी, तृतीया प्रत्ययों में तत्, त्वं, हे (और वह मार्गविभक्तिक तमिल्लु कहलाता है) उन्हीं प्रकार पाली में भी होता है।

कुतो, ततो, यतो, इतो, एत, प्रतो, मन्वतो, पुग्मितो, इतिग्मितो, भिषखुनितो—इत्यादि।

कालवाचक अव्यय—

किं—कदा, कुदान्न

तत् (त)—तदा, तदानि, तद्दी

यत् (य)—यदा

सर्व (सर्व)—सर्वदा

इदम् (इम)—अधुना, इदानि, एतदिति

अन्य (अरुत्र)—अज्जदा

एक—एकदा

प्रकारवाचक—

तथा—तथैत, यथा—यथैत; इत्थ—मन्वथा, मन्वथान्ना, प्रज्जथा ।

विभक्ति के अर्थ को प्रकाशित करनेवाले अव्यय—

प्रथमार्थ—अत्थि, मथा (मत्थ), लब्धो (लब्ध) ।

नार्थ—भमन्मग्ग षो मथोथित कम्मं मे प्राप्पुमो जन्तु वा प्रयोग होता है; तथा भन्ते भेषुं के लिये प्राता है; हीन व्यक्ति के सम्बन्ध में च, अरे, हेर आदि शब्द प्रयुक्त होते हैं। दागं प्रत्यय के मन्वथान् में ये शब्द का प्रयोग होता है।

तृतीयार्थ—सयं (स्वयं), साम (स्वयं), सं (स्वं), समं, सम्मा (सम्यक्) ।

सप्तम्यर्थे—समन्ता, सामन्ता, समन्तो (समन्तात्), परितो, अभितो, एकज्ज (एकत्र), एकमन्तं (एकान्ते), हेट्ठा (अघ-स्तात्), उपरि, तिरिय (तियंक्), सम्मुखा, परम्मुखा (पराङ्मुख), आवि (आवि.—प्रकाशः), रहो, तिरो, अन्तो, अञ्जत्त (अन्थात्म), बहिद्धा (बहिष्ठा), बाहिग्ग, बाहिरं (बहिः, बाह्यं), ओरं (अवर, अस्मिन् पक्षे), पारं (परस्मिन् पक्षे), आरा, आरला (आरात् दूरे), पच्छा (पश्चात्), दुरं (परत्र), पुरे (पुरः), पेच्च (प्रेत्य) ।

कालवाची—सम्पति (सप्रति), आयति (भविष्यत्काले), अज्ज (अद्य), अपरज्जु (अपरेद्युः), परज्जु (परद्युः), सुवे, स्वे (श्वः), उत्तरसुवं (उत्तरश्वः), हिट्थो (ह्यः), परे, सज्ज (सद्यः), सायं, पातो (प्रातः), काल, कल्ल (कल्य), दिवा, रत, निच्चं (नित्य), सततं, अभिण्ह, अभिक्खणं (अभीक्ष्णं), मुहुं (मुहुः), मुहुत्तं (मुहूर्तः), भूतपुब्ब (भूतपूर्व), पुरा इत्यादि ।

अन्यान्य अन्वयगण—

अङ्ग—	संबोधन
अज्जदत्थु—	अन्यदस्तु
अत्थ—	अस्त (अदर्शन)
अत्थि—	अस्ति
अत्थु—	अस्तु
अद्दा—	एकाश, एकान्त
अप्येव—	अप्येवं (सशय-द्योतक)
अप्येव नाम—	अप्पेवं नाम (सशय-सूचक)

असकं—	असकृत्
असु—	पठ-पूरु
आम—	(आम. हा, न्यौकृति-बोचक)
इक्ष—	प्रगणा-प्रवर्तना
ईस—	ईपत्, अल्प. मन्द
ईसक—	” ” ”
उद—	उत (विरल्य गानक)
उदाहु—	उताहा ”
एत्तावता—	एतावता
एन—	एतत्
आपयिक—	सम्भते-गृचक
कचि—	कश्चित् (स्वाभिप्राय-प्रसाङ्ग)
किं न—	किं तत्
किं सु—	किंस्वित् (प्रश्नप्रोक्तक)
किञ्चि—	किञ्चित्
किञ्चावता—	किञ्चिता, कित्ना
किर—	किल
कीव—	किञ्चिन्
चरहि—	तर्हि (पठ-पूरणांश)
खं—	खलु
चे—	चेत्
त—	तत्
तप्य—	एषाग, ए रान्त (निश्चय)
तथग्वि—	तपथ
तावता—	तावता उज्ज्व
तुष्टु—	तुष्टु. गीय

सुद्धु—	सुष्टु, सुन्दर
न—	(एनं) तत्
पगे—	प्रगे, प्रातः
पतिरूपं—	प्रतिरूप, उचित, समान
पन—	पुनः
परसवे—	परश्वः, परसो
पस्य्ह—	प्रसह्य (बलपूर्वक)
पुथु—	पृथक्
पुनपुन—	पुनः-पुनः, बार-बार
पुरत्या—	पुरस्तात्, आगे
बलव—	बलवत्
मनं—	मनाक्, थोडा
मुसा—	मृषा, झूठ
य०—	यत्
यग्घे—	पद-पूरणार्थक
यथरिव—	यथेव
यावता—	यावता, जितना (परिमाण)
लहुं अथवा लहु—	लघु, शीघ्र, सम्मति (निश्चय)
वथ और वत—	वत पदपूरणार्थक
विय—	इव (उपमासूचक)
विसुं—	अलग होना
वे—	वै (निश्चयात्मक)
सचे—	चेत्, तच्चेत्
सच्छि—	साक्षी, शाक्षात्, प्रत्यक्ष
सद्धं—	श्रद्धं, श्रद्धायुक्त
सद्धि	साद्धं, साथ

सनिर्क—	जनकै., जने., धरि मे
सम्मा—	सम्यक्, मुंदर
ससक—	एकाश, निश्चय
सहमा, साहमा—	दृष्टात्, अचानक
सामि—	सामि, अर्थ, अधा
साहु—	साधु
सुद—	पदपूरक
सुवत्थि—	स्वस्ति (मंगल-गुणक)
सुवे—	श्वः
सस्यथापि—	तस्यथापि
सेस्यथीद—	तस्यथेद
द—	द, पदपूरक
दधे—	दधै, (निश्चयान्तरक)

कृदन्त

संस्कृत में वर्तमानकाल प्रोक्त करने के लिये परस्मैपदी धातुओं से शतृ प्रत्यय तथा आत्मनेपदी में जानच् होता है। पाली में शतृ के स्थान में अन्त तथा शानच् के स्थान में आत्मनेपदी माना जाता है। भविष्यत्काल में संस्कृत में स्यन्तृ होता है। उभयक स्थान में पाली में स्सं वा स्मन्तु होता है। यहाँ यह ध्यान देने योग्य है कि जिस प्रकार संस्कृत में परस्मैपदी में शतृ और आत्मनेपदी में जानच् होता है, वैसा नियम पाली में नहीं है। बिना किसी विशेषज्ञ के दोनों पद ही से मत्र प्रत्यय देखे जाते हैं।

अन्त तथा स्सं और स्मन्तु प्रत्यय जिनके अन्त में होते हैं, उन शब्दों के रूप गच्छन्त शब्द के समान होते हैं, और स्सं और स्मन्त प्रत्ययान्त शब्दों के रूप बुद्ध शब्द के समान होंगे।

गम धातु—गम+अन्त = गच्छ, गच्छन्तो, गम+मान = गच्छ-मानो, गम+स्सन्तु = गमिस्म ।

कृ धातु—कुर्वन्तो, करोन्तो, कुरुमानो, करानो, करिस्स

भुञ्ज— भुञ्जन्तो, भुञ्जमानो, भुञ्जानो, भुजिस्स

खाद— खादन्तो, खादमानो, खादानो, खादिस्मं

चर— चरन्तो, चरमानो, चरानो, चरिस्सं

अस धातु—मान = समानो

सुम (शुप्)—मान=मुखमानो

अन्त, अन्तु और स्सन्तु प्रत्ययात से स्त्रीलिंग में ईं प्रत्यय होता है और तब अन्त आदि के नकार का विकल्प में लोप होता है । यथा—गच्छती, गच्छन्ती, करिस्सती, करिस्सन्ती । इन शब्दों के रूप इत्थी शब्द के समान होंगे ।

आन और मान प्रत्ययात शब्द के स्त्रीलिंग में आ प्रत्यय होता है और कञ्जा शब्द के समान रूप हांते हैं ।

नपुंसकलिंग में चित शब्द के समान रूप होते हैं ।

तावी प्रत्यय

कर्तृवाच्य में भूतकाल श्रोतित होने पर, सब धातुओं से तावी प्रत्यय होता है, और उसके परे निष्ठा प्रत्यय के समान कार्य होते हैं । जैसे—भुक्तवान् इस अर्थ में भुज धातु से भुक्तावी होता है । हु धातु से हुतावी तथा वस धातु में वसितावी । तावी और वक्ष्यमाण आवी प्रत्यय जिनके अंत में रहते हैं, उन पदों के रूप दण्डी शब्द के समान होते हैं ।

आवी प्रत्यय

किसी क्रिया के करने का किसी मनुष्य का स्वभाव (शील) हो अथवा उस क्रिया को वह सरलतया अच्छे प्रकार से कर सकता हो (साधुकारी) इन दोनों अर्थों में (तच्छील और तत्साधुकारी

अथों में) पाली में धातु के अनंतर आती प्रत्यय होता है । यथा—
भयं पस्सितुं मीलं यस्म (भय द्रष्टुं गील यस्)—अथान् मन्ना-
वतः ही जो मनुष्य भय देवता है अथान् सर्वत्र निष्कारण भी भय
देखने का जिनका स्वभाव है, उनके लिये भयदस्मावी पद का प्रयोग
होगा । इसी प्रकार भय दिखाने में जो माधुकागी होगा, कृष्ण
हागा, वह भी भयदस्मावी कहलाएगा ।

तावी और आवी प्रत्ययात शब्दों के न्वांलिग में इनो प्रत्यय टाः ।
है । यथा—दृतावी—दृताविनी, भुत्तावी—भुत्ताविनी; युत्तावी—
युत्ताविनी; भयदस्मावी—भयदस्माविनी ।

ऊ प्रत्यय

कर्तृवाच्य में गील श्राद्धि उपयुक्त अर्थ में—पार प्रभति उपपद-
पूर्वक गम धातु, उपपद-पूर्वक भानावर विद धातु, तथा उदगम
अथवा अन्य कोई उपपद—सहित जा (जा) धातु के बाद ऊ प्रत्यय
होता है । यथा—पारगु (मन्कृत पागग), लारुविदू (लोकरित),
विज्जू (विजः), लब्बज्जू (लब्जः) इत्यादि ।

त, तवन्तु (निष्ठा)

संस्कृत के क्त और क्तवन्तु के स्थान में यथाक्रम त और तन्त प्रत्यय
पाली में होते हैं । इन प्रत्यया के होने पर धातु-मन्तों में यथा-
संभव संस्कृत के समान कार्य होते हैं ।

त प्रत्ययात शब्द के रूप अकारगत शब्द के समान तथा तन्त
प्रत्ययात के गुणवन्तु के समान होंगे ।

दु + त = दूतो; दु + तवन्तु—दूतया । यच + त = उचो
यच + तवन्तु = उचया । वम + त = उचो, उचो, उचो,
वमितो, वमितो । वज + त = उचो ।

भञ्ज त=भग्गी, गत (गन्) + त=गत, दम (दम्) +
त=मुग्गं, बुध (वृध्) + त = बुद्धो, परिमन्त + त = परिमन्तो

रुद + त—रोदितं, रोण, रुण, परि + क्त (कृत्—कर्तने)+त= परिकत्त ; दा + त = दत्तं, दिन्न; धा+त = हित, धातं;—मुह+त= मुल्हो; गुह+त=गुल्हो; वह+त=उल्हो ।

आस+त=आसीनो; चर+त=चरित्रो, चरणो ।

कृत्य प्रत्यात

संस्कृत के कृत्य प्रत्यात पद साधारण परिवर्तन के साथ पाली में भी व्यवहृत होते हैं । पाला क्रियाओं से प्रत्यय करने की अपेक्षा संस्कृत कृत्य प्रत्यात स पाली-में परिवर्तन करना विशेष सुकर और युक्ति-सगत होगा ।

भू—स० भवितव्य पा० भवितव्यं—तव्यत्

„ भवनीय „ भवनीय—अनायर

और भी उदाहरण निम्न-लिखित हैं—

उप्यजितव्य, उप्यजनीयं

सथितव्य, सथनीय

' बुद्धिमतव्य, बुद्धिनीय

सुणतव्य, सवणीय

गणितव्य गणनाय

पत्तव्यं, पापुनयाय, पापणीयं

सयत्	दृ घातु—स०	हार्यं	पाली—	हारियं
	कृ—	कार्यं	„	कारिय
	लभ्—	लभ्य	„	लभ
	शाम् (शास्) —	शास्यं	„	सिस्सो

परतु कहीं-कहीं पाली की विशेषता भी दृष्टिगोचर होती है । संस्कृत में जहाँ भ्रातव्यम् हाता है, पालो में त्रिकरण-सहित सुणतव्यं प्रयोग होता है ।

भू—	भाष्यं	भवं
दा—	देय, मा—मंद्य	
कृ—	(कृत्य) कृत्	
भृ—	(भृत्य.) भृषा	

तव्यत् के स्थान में पाली में एक श्रौं प्रत्यय एव भी पाया जाता है—जातय्यं, दद्वय्य, पत्तय्य इत्यादि ।

त्वा, त्वान, तून (कृत्वा)

पूर्वकालिक क्रिया में संस्कृत में कृत्वा (नन्-नि उपसर्ग रहने पर ल्यप्) होता है । पाली में उसके स्थान में त्वा, त्वान और तून होते हैं । इनमें में तून का प्रयोग पाता में विमल दे । यह प्राकृत में अधिकतर पाया जाता है ।

कर (कृ)—कृत्वा, करित्वा, कृत्यान, कृतून

गम—गन्त्वा, गन्त्वान, गन्तून

हन—हन्त्वा, हन्त्वान, हन्तून

मु (श्रु)—मुत्वा, मुणित्वा

जि—जित्वा, जेत्या, चिणित्वा

प—प्राप (स० प्राप) पत्वा, पापुणित्वा

दिस (दृञ)—पस्मित्वा ।

हा—जहित्वा, जहत्वा, जहिन्यान

छिद—छित्वा, छेत्वा, छिन्दित्वा

भिद—भिजित्वा

दा—दत्वा, ददित्वा

य (ल्यप्)

संस्कृत के ल्यप् के बदले पाली में य होता है, यथा—संनि प्रकार धातु में पूर्व उपसर्गादि री भिषति प्रादृश्य है, यथा—दानी में नहीं है । पाली में जाँ न्वा होता है, उमी रथ न न ।

य होता है, चाहे उपसर्ग हो या न हो । संस्कृत में उपसर्ग-पूर्वक धातु में अवश्य ही ल्यप् होता है, किंतु पाली में उस स्थल में भी त्वा देखा जाता है । इस तरह यह स्पष्ट है कि त्वा और य के लिये पाली में नियम नहीं है, रामायण महाभारतादि की संस्कृत में भी ल्यप् का अनियमित प्रयोग पाया जाता है और उपसर्ग-पूर्वक में ही ल्यप् हो यह आवश्यक नहीं है । गृह्य आदि प्रयोग बहुत मिलते हैं और आप्त-प्रयोग कहकर इनका समाधान किया जाता है ।

वन्द—वन्दिय; अभिपूर्वक—अभिवन्दिय, अभिवन्दित्वा, उप+नी+य—उपनीय, उपनेत्वा, नि+सि (श्रि)+य=निस्साय (निःश्रित्य), निस्सित्वा ।

आकारान्त धातु से परवर्ती यकार का कभी-कभी लोप होता है—अभिञ्जा (अभिञ्जाय—अभिजाय), अनुपा+दा+य=अनुपादा (अनुपादाय); पटिसंखा (प्रतिसंख्याय) ।

तुं तवे इत्यादि

संस्कृत के तुमुन् के स्थान में पाली में तुं और तवे प्रत्यय होते हैं । 'तवे' यह प्रयोग वैदिक संस्कृत से लिया गया है; परंतु पाली में आते-आते इसका प्रयोग विरल हो गया है ।

कर+तुं=कर्त्तुं, कातुं ।

मन+तुं=मन्तुं, मन्तुं ।

हन+तुं=हन्तुं, हन्तुं ।

सु (श्रु)—तुं—सातुं, सुणितुं ।

जि—जेतुं, जिन्तुं ।

भुज—भोक्तुं, भुञ्जितुं ।

प + हा—पजहितुं, पहातुं ।

जा—जातुं, जानितुं ।

गह—गहेतुं; गणितुं ।

तथे— . . .

क + तवे = कत्तवे, कातवे ।

नी—नेतवे ।

वि + ह—विपहातवे ।

नि + धा—निवातवे ।

कहीं-कहीं नुम् अर्थ में ताये और नुये प्रत्यय भी देने जान है ।
यथा—दिस (दृश्) + ताये = इतिपतायेः गण + तुम् = गणेतुम् ; म
(मृ) + तुये = मरितुये ।

समास-प्रकरण

समास-प्रकरण पाली में भी प्रायः मन्वृत के ही समान है । समास के भेद भी प्रायः समान हैं, परन्तु कर्त्तृ-कर्ता पाली में मन्वृत के नियम में विपरीत प्रकार के समास भी देने जान है । इनका विवेचन नीचे किया जाता है । पाली प्रायः मन्वृत में प्रधान अक्षर है, मन्वि-विषयक नियम में । मन्वृत में 'मन्वितैकपदे निरा निरा शहर-मर्गयोः । निन्या समाने वाये न सा विवक्षानपेक्षने' इन नियम के अनुसार समास में मन्धि हाना आवश्यक है, परन्तु पाली में यथा-यभी इस नियम का पालन नहीं होता । यथा—'उपलित पदमन्वि मता अग्निगम्यन्वोः' 'सनेगम जनपद—ममघा . पन्तिरो.' 'मन्वृ—इति वेगजनित हलाहलमह.' 'इति आदिनु पालिमु' इत्यादि ।

मन्वृत के समान पाली में भी अव्ययीभाव, तत्पुन्य (इमो के अतर्गत पर्यधाय्य और द्विगु), तत्र प्रायः बहुव्रीहि के समास के भेद हैं । सन्वृत के व्याकरण-ग्रंथों में इनका विवेचन पुनः तत्र किया

* अत्रात् एक ही पद में, यात्र नोः अर्थ में, तथा समास में सहिता (मन्धि) नित्य हता है । मन्वृत में मन्वि-विषयके ही इन्द्रा पर निर्भर है, चाहे मन्धि ही अत्र चाहे न ही अत्र ।

चाया है। यहाँ उन सब नियमों के उल्लेख करने की आवश्यकता नहीं है। केवल विशेष-विशेष नियमों का ही यहाँ विवेचन होगा।

अव्ययीभाव में, पाली और संस्कृत में कोई अंतर नहीं है। उपगग, अनुरथ यावजीवं इत्यादि प्रयोग सब संस्कृत के आघार पर हैं। संस्कृत में अप परि बहि आदि अव्ययों के योग में पंचमी का विकल्प से लोप होता है। यह वैकल्पिक रूप भी पाली में उसी प्रकार स्वतंत्र रूप से व्यवहृत होता है। यथा अपपञ्चता अथवा अपपञ्चतं; बहिगामा अथवा बहिगाम इत्यादि।

तत्पुरुष

द्वितीया तत्पुरुष—अरञ्जं + गतो—अरञ्जगतो; सुखं—प्राप्तः सुखप्राप्तः।

तृतीया तत्पुरुष (ततिय तत्पुरिस)—बुद्धमाक्षितो।

त्रि-जुगरहितो, सुकाहट, जञ्चंधो।

कहीं-कहीं मध्यम पद का लोप हो जाता है। यथा—

गुलेन ससट्ठो श्रोदनो—गुलोदनो।

अस्सेन युतो रथो—अस्मरथो।

चतुर्थी तत्पुरुष (चतुत्थी तत्पुरिस)—

संभमत्त, बुद्धदेय्य।

पञ्चमी तत्पुरुष (पञ्चमी तत्पुरिस)—

नगरम्हा निगतो—नगरनिगतो।

रुक्खस्मा पत्तितो—रुक्खपत्तितो।

सामनम्हा चुतो—सासनचुतो।

चोरा भीतो—चोरभीतो।

पापभीरुको, पापजिगुच्छि, बन्धनमोक्खो।

षष्ठी तत्पुरुष—इसमें प्रथम पद में स्थित दीर्घ ई और ऊ प्रायः ह्रस्व हो जाते हैं।

नदिया तीरं—नदितीर ।

मिक्खुनीन संबो—मिक्खुनिसणो ।

नरानं उत्तमो—नरुत्तमो ।

सप्तमी तत्पुरुष (सप्तमी तापुरिस)

अरुज्जेवासो—अरुज्जवासो ।

धम्मरतो; वनच्छरो; थलट्ठो, पञ्चतट्ठा इत्यादि ।

अलुत्त तापुरिस—इसमें पूर्व पद की विभक्ति का लोप नहीं होता—संस्कृत में इस अलुक् समास करते हैं—

पमकरो; परस्परद; अत्तनोपद; कुतोजं: अननामिको; उरसिलोमा ।

कर्मधारय

(१) कर्मधारय समास में विशेषण महन्त के स्थान में महा ली जाता है । (स्मरण रहे कि महद्गत की ही यह छाया है) जैसे यदि परवर्ती व्यञ्जन को द्वित्व होता है, तो महा न होकर मह होना है ।

महन्तो पुंसो—महापुंसो ।

महन्तो नदी-महानदी ।

महन्त भयं—महद्भय ।

(२) संत (संदृष्ट-सर्) शब्द के स्थान में पाली में म होता है ।

(३) यदि कर्मधारय के दोनों पद स्त्रीलिंगान् गत हैं, तो पुं लिंग पद को पुंवाच्य होता है । अर्थात् यहाँ उनके पुल्लिंग का रूप होता है ।

(४) महद्गत के समान पाली में भी नञ् के नकार के स्थान में व्यञ्जन म पूर्व अकार तथा स्वर ने पुं लिंग आता है । यथा

असम्म, अप्पमाटो, अनत्थो, अनदुत्तं ।

(५) कुस्मिन् श्रीर दीन शर्थ को जोतिता वनेदने कुं न नान मे व्यञ्जन ने पूर्व क श्रीर स्वर से पूर्व नञ् होता है ।

द्विगु

द्विगु समास के दो भेद हैं—

(१) समाहार द्विगु—यह समूहवाचक होने के कारण सामान्यतः एकवचन और नपुंसकलिंग में होता है ।

(२) असमाहार—इसमें समूह का ज्ञान न होकर उतने संख्यक व्यक्तियों का बोध होता है ।

समाहार द्विगु—

तिलोक—तीन लोकों का समूह ।

तिरतनं—सत्ताह, ५५ सिक्खा पद ।

चतुसच्चं, द्विरत्त, पञ्चगवं ।

असमाहार

तिभवा—तीन जन्म—पृथक्-पृथक् ।

चतुदिमा—पञ्चिन्द्रियाणि ।

सकटसतानि—चतुस्तानि, द्विसत्सहस्रानि ।

द्वंद्व

द्वंद्व समास में दोनों पद समान रूप में सामर्थ्य रखते हैं । द्वंद्व समास दो प्रकार के हैं । एक वह, जिसमें दोनों पद पृथक्-पृथक् अपना महत्त्व रखते हैं, और समस्त पद का वचन दोनों पदों के संयुक्त वचन के अनुसार होता है । दूसरा प्रकार है, समाहार द्वंद्व । इसमें दोनों पद मिलकर एक समूह का द्योतन करते हैं, अतः नपुंसक लिंग (सामान्यतः) और एकवचन में प्रयुक्त होते हैं । प्राणि के अंग, सेनाग आदि अनेक अर्थों में यह समाहार द्वंद्व होता है । इसका विवेचन संस्कृत-व्याकरण में विशदतया किया गया है । प्रायः संस्कृत के आधार पर ही संस्कृत पदों से ही पाली में भी परिवर्तन होते हैं, और इसलिये यहाँ उन सब संस्कृत के नियमों के उल्लेख करने की आव-

श्यकता नहीं है। इसी प्रकार द्व द्व में किस पद का प्रयोग पूर्व में होगा, किसका पर में होगा, इसके भी नियम मन्वृत में हैं, तदनुसार ही पाली में प्रयोग हाते हैं, इसलिए उन नियमों का उल्लेख करना यहाँ विस्तार-मय में उचित नहीं प्रतीत होता। उदाहरण—

- (१) समगा च ब्राह्मणा च समगब्राह्मणा ।
 देवा च मनुस्मा च देवमनुस्मा ।
 अग्नी च धूमो च अग्निधूमा ।
 धम्मो च अत्थो च धम्मत्था ।
- (२) मुखनामिक, छविममलाहित ।
 जरामरण, हत्यपाद, हत्यस्म ।

बहुव्रीहि (बहुव्योहि)

बहुव्रीहि समास अन्वयपदप्रधान होता है। अर्थात् बहुव्रीहि में जो दो पद ममस्त होते हैं, उनके अतिरिक्त एक तीसरे व्यक्ति का संबन्ध होता है। जैसे सुन्दर + अश्व यह यदि घोड़ा का योगित होगा, तो सुन्दराश्व यह कर्मधारय समास होगा। परन्तु यदि न तो सुन्दर को चोदित करेगा और न अश्व को, प्रत्युत उस पुरुष अथवा उस स्थ को, जिसके अथवा जिसमें सुन्दर अश्व हो, तो सुन्दर और अश्व के अतिरिक्त एक तृतीय व्यक्ति को याचित करने के कारण यह समास हुआ। बहुव्रीहि विशेषण ही जाता है, परन्तु विशेषण के अनुसार उसके जिन वचन होते हैं।

यहाँ भी पाली में प्रायः कोई विशेषण नहीं है अतः समास के आधार पर समास हुए शब्दों में परिवर्तन होकर पाली में बनते हैं, इसलिए उसका विशेष उल्लेख यहाँ नहीं किया जाता।

जिस प्रकार संस्कृत में ग्रीणिग पूर्वपद के पदान्तर होने के हैं, जिस प्रकार धर्म आदि शब्दों में आनेच्छादि शब्दों के अन्तः

का विधान है, उसी प्रकार पाली में भी संस्कृत का अनुकरण किया गया है। समास-प्रकरण में पाली की मौलिकता का प्रायः अभाव-सा है। बहुव्रीहि समास के कुछ उदाहरण नीचे दिए जाते हैं—

बहुजनो गामो; दीघजङ्घा इत्थी; दीघजङ्घो पुरिसो ; महापञ्जो ; पञ्चक्खधम्मा; त्रिसुद्धसीलो जनो; द्विमूलो ऋखो, जित्तिन्द्रियो समणो; विजितमारो भगवा ; दिन्नसुल्ल पुरिमो, छिन्नहत्थो पुरिसो इत्यादि ।

उपपद-समास

ये भी विलकुल संस्कृत के आधार पर स्थित हैं। यथा—कुम्मकारो; ब्रह्मचारी ; रथकारो इत्यादि। समासात् प्रत्ययो के लिये भी संस्कृत ही आधार है।

कारक और विभक्ति

पाली का कारक-प्रकरण भी प्रायः संस्कृत के समान ही है। कहीं-कहीं थोड़ा-सा अंतर है। सप्तमी के स्थान में कभी-कभी द्वितीया का प्रयोग होता है। यथा—एक समयं भगवा सागत्थिय विहरति। पव्वहसमयं निवासेत्वा, एक अन्तं इत्यादि।

कभी-कभी सप्तमी के स्थान में तृतीया होती है। यथा—तेन खो पन-ममथेन भगवा एतदवोच (तस्मिन् खलु पुनः समये भगवान् एतदवोचत्); येन भगवा तेनुपसकर्मिसु—यत्र भगवान् तत्र उपसमक्रामिपुः पष्ठी का प्रयोग बहुलता से होता है। तेलस्स ददाति (तेल देता है) यहाँ कर्म के स्थान में पष्ठी का प्रयोग है।

कभी-कभी सप्तमी के स्थान में पष्ठी होती है, यदि किसी विषय में कुशलता व्यक्त करनी हो। यथा कुशला नच्च गीतस्स।

अन्य कारक संस्कृत के समान होते हैं।

तद्धित-प्रकरण

धातुओं से साक्षात् प्रत्यय लगकर जो प्रातिपदिक बनते हैं, वे कृत्

प्रत्ययात कहलाते हैं। प्रातिपदिक में अग्न्य इत्यादि अर्थ में प्रत्यय लगकर जो दूसरे प्रातिपदिक बनते हैं, वे तद्धित प्रत्यय कहलाते हैं। संस्कृत में तद्धित प्रत्ययों का बहुत विस्तार में वर्णन किया गया है। पाली में प्रायः संस्कृत प्रत्ययान्तों के परिवर्तन होता है, यन्त कहीं-कहीं पाली के रूप में भी प्रत्यय होते हैं। ऐसे कुछ प्रत्ययों का विवेचन नीचे किया जाता है, जिन्हें तद्धित प्रत्ययों का विशेषता देखनी हो, वे मूल संस्कृत के अवलोकन करें।

जात—उत्पन्न आदि अर्थ में इम प्रत्यय होता है। यथा— वन्ता (पश्चात्) + इम = वन्तिमो (संस्कृत पश्चिमः)

अन्त + इम = अन्तिमो, मन्त्र + इम = मन्त्रिमो।

हेहा + इम = हेहिमा।

संस्कृत में योग्य अर्थ में कृदन्त प्रत्यय अनीय होता है, जैसे वन्द धातु में वन्दन करने योग्य अर्थ में वन्दनीय होता है। परन्तु इसी प्रकार 'स्थान'वाचक होने पर वन्दन इत्यादि पदों में पाली में ईय प्रत्यय होता है, जैसे वन्दन वा स्थान वन्दनीय पदार्थ होता है। मदन का स्थान मदनीय, मद्यनस्म (मोचनस्म) + ईय = मदीयः उपादान + ईय = उपादानीय।

कुछ प्रत्यय ऐसे भी मिलते हैं, जो केवल पाली में प्रातिपदिक समझे जा सकते हैं। न तो संस्कृत में उनकी समानता तथा निरूपण है, और न बाद की भाषाओं में ही रही उनका उदाहरण है। ऐसे प्रत्ययों में से एक प्रत्यय है 'प्रतिपत्ति'। उदाहरण प्रातिपदिकों पर उपमावाची शब्द में उक्त प्रातिपत्ति प्रत्यय होता है। प्रातिपत्ति— ध्रुवो विद्य दिग्मति इति धुरानित्त इती प्रत्यय विधिगति इति होता है। संस्कृत में प्राचागर्भक यद्वा प्रत्ययों का वर्णन होता है। प्रत्यय इव प्राचगति ध्रुवायते। प्राच होता है इती प्रत्यय पर ध्रुवायते ने धुरानित्त रूप बनता है।

‘वह उससे आश्रित’ अथवा ‘वह उसका स्थान है’ इस अर्थ में पाली में ल प्रत्यय होता है। बुद्दु निस्सित अथवा बुद्दु ठानं इस अर्थ में बुद्दु न्त रूप होता है। इसी प्रकार वेदनिस्सितं अथवा वेदस्सठानं इस अर्थ में वेदल्ल होता है।

मावार्यकत्व के अर्थ में पाली में त्तन प्रत्यय होता है। पुथुज्जनस्स भावो (पृथग्जनस्थ भावः) पुथुज्जनत्तनं ।

एव—वेदनस्स भावो—वेदनत्तनं ।

इसी अर्थ में पाली में व्य प्रत्यय भी होता है। दासव्य ।

एट्ट प्रत्यय भी कहीं-कहीं होता है। यथा आलसेय्य ।

निर्धारणार्थक प्रत्यय तरप् तमप् और इष्ठन् के समान पाली में तर तम और इट्ट के अतिरिक्त इस्सिक तथा इय प्रत्यय भी होते हैं। यथा—पापतरो, पापतमो, पाप्पिस्सिको, पाप्पियो, पाप्पिट्ठो, पटुतरो, पटुतमो, पटिस्सिको, पटियो, पटिट्ठो ।

संस्कृत में ‘इतने वार’ व्यक्त करने के लिये सख्यावाचक शब्द से कृत्वसुच् (कृत्वः) प्रत्यय होता है। जैसे कोई मनुष्य दिन में पाँच वार भोजन करता है, तो उसके लिये प्रयोग होगा पञ्चकृत्वः अहो भोजनम् । पाली में इस कृत्व. के स्थान में क्खत्तुं होता है। पञ्चकृत्वः के स्थान में पाली में पच्चक्खत्तुं होगा। इसी तरह एकक्खत्तुं, द्विक्खत्तुं, तिक्खत्तुं इत्यादि प्रयोग होंगे।

संस्कृत में लोम शब्द से श प्रत्यय हाकर लोमश शब्द बनता है, और उसका अर्थ होता है अधिक रोमवाला। उन्नी के ढंग पर पाली में भी लोमसो रूप तो हाता ही है, अन्यान्य शब्दों से भी ‘स’ प्रत्यय इसी अर्थ में पाया जाता है। यथा मेघासो ।

स्त्रीप्रत्यय

अन्य प्रकरणों के समान इस प्रकरण में भी पाली के ही कुछ विशेष नियमों का उल्लेख किया जाता है।

संस्कृत में इन् प्रत्ययात् शब्दों में ई प्रत्यय (टीन्) होता है, यथा—ब्रह्मचारिन्=ब्रह्मचारिणी; वजिन्=वजिनी; मनस्विन्=मनस्विनी । पाली में भी इन् प्रत्ययातां में तो ई प्रत्यय होता ही है, परंतु प्रायः अन्य इकारात् उकारात् शब्दों में भी नो प्रत्यय होता है । कहीं-कहीं ई और इनी दोनों प्रत्यय होते हैं, यथा—इस्थि=इस्थिनी वन्धु=वन्धुनी । भिस्सु=भिस्सुनी । पट्टु=पट्टुनी । यग्ग=यग्गिनी । नाग=नागिनी । सोह=सोही, साहिनी । मिग्ग=मिग्गी, मिग्गिनी । वर्तमान हिंदी में भी इस ना का पभाव पडा है, श्रींग जिंग प्रकार संस्कृत में आचार्यानी, इन्द्राणी, भवानी आदि स्त्रीप्रत्ययान पड होते हैं, उसी के आधार पर पाली में गहपति में गहपतानी आदि प्रयोग पाए जाते हैं, और हिंदी में पण्डितानी आदि प्रयोगों का उन् इसी में मिलता है ।

पाली में बहुत से शब्दों में आ और इ तथा इनी तंत्रा प्रत्यय पाए जाते हैं ।

यथा—मानुम=मानुमा, मानुमी, मानुमिनी । कुम्भकारा=कुम्भकारा । कुम्भकारी । यग्ग=यग्गी, यग्गिनी ।

अत्थकाम=अत्थकामा, अत्थकामी, अत्थकामिनी ।



पाठावली

धम्म पद से

यो च वस्मसतं जन्तु अग्निं परिचरे वने ;
एकञ्च भावित्तानं मुहुत्तमपि पूजये ।
सा येव पूजना सेय्या यञ्चे वस्ससतं हृत ;
अभिवादनीलस्स निच्चं ब्रह्मापचायिनो ।
चत्तारो धम्मा वड्ढन्ति आयु वरणो सुखं बल ,
यो च वस्ससत जीवे दुस्सीलो असमाहितो ।
एकाहं जीवितं सेय्या पञ्जावन्तस्स भायिनो ;
सब्बे तसन्ति दरडस्स सब्बे मायन्ति मच्चुनो ।
अत्तानं उपमं कत्वा न हनेय्य न घातये ;
सुखकामानि भूतानि यो दरडेन विहिसति ।
अत्तनो सुखमेमानो येच्च सो न लभते सुखं ;
अत्ता हि अत्तनो नाथो को हि नाथो परो सिया ।
अत्तना हि सुदन्तेन नाथं लभति दुल्लभं ;
न हि वेरेण वेरानि सम्मन्तीध कुदाचन ।
अवेरेण च सम्मन्ति एस धम्मो सनन्तनो ;
सेलो यथा एकघनो वातेन न समीरति ।
एवं निन्दापरसामु न समिञ्चन्ति परिहता ;
कोधं जहे विप्पजहेय्य मान संयोजन सब्बमतिकमेय्य ।
तं नामरूपस्मिं असञ्जमान अकिञ्चनं नानुपतन्ति दुक्खा ;

यो वे उपतित कोशं रथ मन्त्र व धाम्ये ।
 तमह माग्धि ब्र मि रस्मिग्गाहं इतगं जनो -
 श्रकोवेन जिने कोध श्रमायं मायुना जिने ।
 जिने कः गिय दानेन मन्त्रेन श्रलाश्रदादिन :
 न तेन थंग हांति येनस्म फनिन गिग ।
 पस्पिका वयो तस्य मोघजिपणाति उघति ।
 यग्धि सच्च च धम्मो च श्रदिसा मयमो दमा ।
 म व वन्तमलां धीगे थंरंति पद्यति ।
 मन्त्रं सद्दारा अनिघाति यदा पञ्जाय पस्मनि ।
 श्रथ नाब्बन्दती तुवसे एम मग्गा त्रिमुद्धिया :
 दिवा तपति श्रादिद्या रत्ति आभाति चन्दिमा
 मन्नद्धो खत्तियां तपति भायी तपात ब्राह्मणो ;
 श्र सन्नमहोत्त बुद्धा तपति तेजमा ।
 न जटाहि न गोत्तेन न जया हांति ब्राह्मण ।
 यग्धि मन्त्र च धम्मो च मो सुत्तो मो च ब्राह्मण ।

धम्मपद की टीका से उद्धृत

न पुण्यगन्धो पटिवातनेति न चन्दन तगरमत्तिवा द
 सतं च गन्धो पटिवातनेति मन्त्रा इदमा म्पुग्गिमां दयाति ।
 चन्दन तगरं वापि उपपल एथ वस्मिमा ।
 एतेसं गन्धजातान् मीलगन्धो अनुत्तरो ति ।

तस्य न पुण्यगन्धाति तावतिमभवने पान्निउत्तरो एतदगन्धो च
 वित्पारतो च राजनमतिको तस्म पुण्यान् प्रामा पश्यान् मोत्तमान्
 गच्छति. गन्धो योजनमत्र, मोपि अनुवात एव. पटिवात एव एतन्न वि
 गन्तुं न सयांति. एवन्पो वि न पुण्यगन्धो पटिवात एति । चन्दन इ
 चन्दनगन्धा । तगरमत्तिवा याति इनेन वि गन्धो एव इति वेने,

सारगन्धान अग्गस्स लोहितचन्दनस्मापि तगरमल्लिकाय पि अनुवातं एव याति नो पटिवात । सतञ्च गन्धो ति सपुसिसानं पन बुद्धपच्चेक-बुद्धसावकान सीलगन्धो पटिवात एति । किङ्कायणा ? सव्वा दिसा सपुसिसो पवाति यस्मा सपुसिसो सीलगन्धेन सव्वा दिसा अज्ज्जोत्थ-रित्वा गच्छति तस्मा तस्स गन्धो पटिवातमेतीति वत्तब्बो, तेन बुत्त पटिवातमेति ति । वस्सिकी ति जातिसुमना । एतेस ति इमंस्स चन्दना-दीनं गन्धजातानं गन्धतो सीलगन्धान सपुसिसान मीलगन्धो व अनुत्तरो असदिसो अण्णटिभागो ति ।

देसनावसाने बहू सोतापत्तिफलादीनि पत्ता, देसना महाजनस्स सात्थिका जाता ति ।

बालानवखत्तघुट्ठवत्थु

एकस्मि हि समये सावत्थियं बालानवखत्त नाम घुट्ठं, तस्मिं नवखत्ते बालदुग्धभेज्जना चारिकाय चैव गोमयेन च सरीरं भवत्तेत्वा सत्ताह असब्भं भणन्तो विचरन्ति; तस्मि जातिसुहृजे वा पव्वजित वा दित्वा लज्जन्तो नाम नत्थि, द्वारे ठत्वा असब्भ भणन्ति, मनुस्सा तेस असब्भ सोतुं असक्कान्ता यथावल ऋड्ढ वा कफापण वा पेसेन्ति; ते तेस धरे लद्ध लद्धं गहेत्वा पक्कमन्ति । तदा पन सावत्थिय पञ्च-कोटिमत्ता अरियमावका, ते सत्थु सत्तिक पेसथिसुः भगवा भन्ते सत्ताहं भिक्खुमधेन सद्धि नगर अपविसित्वा विहारे येव होत्ति । तं च पन सत्ताह भिक्खुसवस्स विहारे येव यागुभत्तादीनि सम्पादेत्वा सथ पि गोहा न निक्खमिसु । नवखत्ते पन परियोसिते अट्टमे पन दिवसे बुद्धपमुखं भिक्खुसधं निमन्तेत्वा नगरं पवेनेत्वा महादानं दत्त्वा एकमन्त निसिन्ना, 'भन्ते अत्तिदुक्खेन नो सत्त दिवसा अत्तिकन्ता बालान असब्भानं सुणन्तान करणा भिज्जनाकारणत्ता होन्ति, कोचि कस्सचि न लज्जति, तेन मय तुम्हाक अन्तो नगरं पविसित्तुं न दग्घ, मयं पि गोहतो न निक्खमिम्हा' ति आहंसु । सत्था तेसं कथ

मुक्त्वा 'बालानं दुग्धमधानं क्रिया नाम एव रूपा द्योति, मेधाधिनो वन
धनमारं विय अण्यमाद ग्विष्वत्वा अमतमहानिबानमपनि पापुगन्नि'
वत्वा इमा गाथा अभामि—

पमाद अनुयुज्जन्ति बाला दुग्धमधिनो जना :
अण्यमादं च मेधावी धन मेदृ व ग्वयति ।
मा पमादं अनुयुज्जेथ मा कामरतिमन्थय ;
अण्यमन्तो हि भ्नायन्तो पापंति विपुलं सुय नि ।

निर्वाण

यथा हि लोके दुग्धस्म पटिपक्वभूतं मुग्धं नाम अग्नि, भवं मा
तापटिपक्वनेन विभवेनापि भवितव्य, यथा च उग्रे गति तस्म दुग्ध
भूतं सीतस्य अग्नि, एव गगादीन व्रममेन निव्याणेनापि भवितव्य ।
यथा पापक-स लामकस्म धम्मस्म पटिपक्वभूता कल्याणा अनर
धम्मोपि अस्ति येव, एवमेव पापि काय जातिरा गति र्व्यजातिरभिमनो
अजातिमंखातेन निव्याणेनापि भवितव्यमेव तिनं तुत्त —

“यथापि दुग्धे विज्जन्ते मुग्धं नानापि विज्जति .
एव भवे विज्जमाने विभवोपि इच्छित्तवरो ।
यथापि उग्रे विज्जन्ते अपरं विज्जति सीतल .
एव विदिधग्गे विज्जन्ते निव्यानं इच्छित्तवरो ।
यथापि पापं विज्जन्ते कल्याणमपि विज्जति
एव जातिग्घे विज्जन्ते अजातिग्घे इच्छित्तवरो ।”

यथा नाम अग्रासिग्घे निमग्गेन पुग्घिनं दूग्धां पक्वत्तं
पदुग्धमच्छन्नं महातलाक दिग्घा फतेरेन नृग्गे मग्गेन एव गत्तं रतिं
तं तलाक गवेसित्तुं युत्तं, यं तस्म अगग्गेन न ग्गे एव गत्तं उग्घा ।
एव किलेममग्घोवने अमतमहानिबानमपनि विज्जन्ते एव
अगग्गेन न अमतमहानिबानमहाजलाकस्म वेग्गे । यथा हि वेग्गे

‘हि संपवारितो पुरिसो पलायनमग्गे विज्जमानेपि स चे न पलायति,
 न सो मग्गस्स दोसो पुरिसस्सेव दोसो; एवमेव किलेसेहि परिवारेत्वा
 गहितस्स पुरिसस्स विज्जमाने येव निव्यानगामिंहे सिवे मग्गे, मग्गस्स
 अगवेसनं नाम न मग्गस्स दोसो, पुग्गलस्सेव दोसो । यथा च
 व्याधिपीलितो पुरिसो विज्जमाने व्याधितिकिच्छके वेज्जे, सचे त वेज्जं
 गवेसित्वा व्याधिन्न तिकिच्छापेति, न सो वेज्जस्स दोसो; एवमेव यो
 किलेसव्याधिपीलितो किलेसवपसमनमग्गकोविद विज्जमानमेव आच-
 रिय न गवेसति, तस्मेव दोसो, न किलेसविनासकस्स आचरियंस्साति ।

तेन बुत्तं—

यथा गूथगतो पुरिसो तलाक दिस्वान पूरितं ;
 न गवेसति त तलाक न दोसो तलाकस्म मो ।
 एवं किलेसमलधोवे विज्जन्ते अमतन्तले ;
 न गवेसति त तलाकं न दोसो अमतन्तले ।
 यथा अरीहि परिरुद्धो विज्जन्ते गमने पथे ;
 न पलायति सो पुरिसो न दोसो अज्जसस्स सो ।
 एवं किले सपरिरुद्धो विज्जमाने सिवं पथं ;
 न गवेसति तं मग्ग न दोसो सिवमज्जमे ।
 यथारि व्याधितो पुरिसो विज्जमाने तिकिच्छके ,
 न तिकिच्छापेति त व्याधि न सो दोसो तिकिच्छके ।
 एव किलेसव्याधीहि दुत्थितो पटिपोलितो ,
 न गवेसति त आचरिय न सो दोसो विनायकेति ।

दसरथजातकं

अतीते वाराणसियं दसरथमहाराजा नाम अगतिगमनं पहाय
 धम्मेन रज्जं कारेसि । तस्स सोजसन्नं इत्थिसहस्सान जेहिका
 अग्गमहेसी द्वे पुत्ते एकं च धीतरं विजायि । जेहपुत्तो रामण्डितो
 नाम अहोसि, दुत्तियो लखणकुमारो नाम, धीता सीतादेवी नाम ।

अपरभागे अग्गमहेमी काल अकामि । राजा तस्मा राजान्तर नि-
 सोकवम गत्वा अमच्छेदि मज्जायिता नस्मा उच्छेदपणि व क्षय
 अज्ज अग्गमहेमिद्वान टपेमि । मा' रज्जा यिया अशानि गन्ता ।
 सापि अपरभाग गच्छ गनिन्त्या लङ्गगच्छपरिगार, पुन वि- वि,
 मगतकुमागे तिस्र नाम कग्गिमु । राजा पुनमिनेहेन 'भहे उ ने उरिम,
 गग्गहार्हाति' आह । मा गदितरु अन्वा टपेन्वा कुम उर उह उग्ग
 काले राजान उपमकमिन्वा 'देव, तुग्गेहि मत्त पत्तम उग्ग विद्या,
 इदानिस्स न देथाति' आह । 'गग्ग भहे ति ।' 'देव, पुनम्म मे उग्ग
 देथाति ।'

राजा अच्छुर पहात्वा 'नस्म वमनि । मत्त हे पुना अग्गि उग्ग रा
 गविय जलन्ति त मारापेत्वा तव पुत्तस्स उग्गं यान्तीति' तपेमि ।
 सा भीता मिरिगम्भ परिभित्वा अज्जमु दिवसेमु राज न पुन पुन उग्ग
 मेव याचि । राजा तस्मा तं वर अट्ठत्वा व निन्तमि—'भारुगामा
 नाम अकत्तजू मित्तदूमी, अय मे कुरपग्गं वा उग्ग उग्गं वा राजा
 पुत्ते घातापेय्याति' सो पुत्ते पथापेत्वा त अत्थ 'गग्गहेरा ताव
 तुग्गहार्कं इध वसन्तानं अन्तगयोपि भवेत्तु ; तुग्गे म मन्ता वा
 अरज्जं वा गन्त्या मम धूमकाले आगन्त्या उल्लसन्त्या उग्ग मग्गं उग्ग-
 याति' वत्वा पुन नेमित्तिने पथापेत्वा अन्तना 'यापुत्ति-उग्ग
 पुच्छित्वा 'गज्जानि दादम वस्मानि परनिस्सयीति' तु वा 'जान इहा
 द्वादसवस्मस्येन आगन्त्या उज्ज उग्गापेत्वायाते' आह । 'म, पु-
 ति वत्वा पितर वन्दित्वा रोदन्ता पानादा अग्गं ति ।' उग्ग हेरा
 अट्ठमि भातिवेदि मदि गग्गिग्गामीति तिग्ग उग्ग उग्ग उग्ग उग्ग
 निग्गमि । ते तत्रापि म्हाज्जनपरिगारा निग्गमिन्त्या मग्ग न निग्ग-
 त्त्या अनुपुब्बेन दिमवन्त पविमि वा नग्गग्गग्ग उग्ग उग्ग उग्ग उग्ग
 अस्सम मापेत्वा फलाफलेन रापेन्ना धम्मिमु । अग्ग उग्ग उग्ग उग्ग
 सीता च रामरघिदत् याचित्ता 'तुग्गे अग्ग उग्ग उग्ग उग्ग उग्ग उग्ग

अस्समे येव होय, मय फलाफल आहरित्वा तुम्हें पोसेस्सामाति' पटिञ्जं गण्हिसु । ततो पट्टाय रामपण्डितो तत्येव होति, इतरे फलाफल आहरित्वा तं पटिजगिंसु । एवं तेस फलाफलेन यापेत्वा वसन्तानं दसरथमहाराजा पुत्तसोकेन नवमे संवच्छरे कालं अकासि । तस्स सरीरक्किच्चं करित्वा देवी अत्तनो पुत्तस्स भरतकुमारस्स 'छुत्त उस्सापेथाति' आह । अमच्चा पन 'छुत्तसामिका अरञ्जे वसन्तीति' न अदसु । भरतकुमारो 'भम भातरं रामपण्डितं अरञ्जा अनेत्वा छुत्तं उस्सापेत्सामीति' पञ्चराजककुधमण्डानि गहेत्वा चतुरङ्गिनिया सेनाय तस्स वसनट्टानं पत्वा अविदूरे खन्धावारं निवासेत्वा कतिपयेहि अमाच्चेहि सद्धि लक्खणपण्डितस्स च सीताय च अरञ्ज गतकाले अस्समपदं पविसित्वा अस्समपदद्वारे सुट्ट ठपित कञ्चनरूपकं विय रामपण्डित निरासङ्कं सुखनिसिन्नं उपसङ्गमित्वा वन्दित्वा एकमन्त ठितो रञ्जो पवत्ति आरोचेत्वा सद्धि अमच्चेहि पादेसु पतित्वा रोदि । रामपण्डितो नेव सोचि न रोदि, इन्द्रियविकारमत्तम्पिस्स नाहोसि । भरतरस पनरोदित्वा निसिन्नकाले सायण्हसमये इतरे द्वे फलाफले आदाय आगमिंसु । रामपण्डितो चिन्तेसि 'इमे दहरा, मय्हं विय परिगण्हनपञ्जा एतेस नल्लि, सहसा 'पिता वो मतोति' बुत्ते सोकं धारेतुं असक्कोन्तान् इदयम्पि तेस फलेय्य । उपायेन ते उदकं ओतरित्वा एतं पवत्ति सावेस्सामीति ।' अथ नेसं पुरतो एकं उदकट्टानं दस्सेत्वा 'तुम्हे अतिचिरेन आगता, इदं वो, दण्डकम्म होतु—इमं उदकं ओतरित्वा तिट्ठया—ति' उपडढगाथ ताव आह ।

'एथ लक्खण सीता च उभो ओतरथोदकन्ति ।' ते एकवचनेन ओतरित्वा अट्टंसु । अथ नेस तं पवत्ति आरोचेन्तो सेसं उपडढगाथमाह—

'एवायं भरतो आह राजा दसरथो मतोति ।'

ते तित्तु मतसासन सुत्वा व विसञ्जा अहेसुं । पुन पि नेसं कथेसि,

पुन विमज्जा अहेमुन्ति । एवं यवानिय विमज्जिनं यत्तं नः श्रमया
उविलपित्वा उदका नीहरित्वा थले निमीज्जापेत्वा लद्धग्मानेमुं देसुं ४२
अज्जमज्ज रोद्धिन्वा परिदेवित्वा निमांदिमु । तदा भग्गुमागं
चिन्तेमि—'मच्छ' माता लब्धवणुमानो भगिनी च मां मादेवा १४३-
मत सामन मुत्वा व मां मथारतुं न मज्जान्ति, गमपगिट्ठां यन न
सोचन्ति न परिदेवति, किन्तु म्वा तम्म भ्रमांजनराग्गं पुत्तिग्गामि
नन्ति' मा त पुच्छन्ता दुतियगाग्गमाह—

'केन गमपभावेन सान्चित्तं न मोचमि ।

पितरं कालगतं मुत्वा न तं पमत्तं दुग्गन्मि ।'

अथ-स्स गमपगिट्ठो अत्तनो भ्रमांजनराग्गं कग्गन्ता

'य न सक्का पालेतुं पोमेन लग्गं चण्णं ।

म कस्म विज्जुं मेधावी अत्तानमुपतापये ।

दत्ता च हि बुद्धा च ये वाला ये च पण्डिता

अट्ठदा चेव दग्गिहा च मन्वे मन्नुपगयणा ।

फलानमिव पणानं निच्च पपतना भय ।

एव जातान मज्जान निच्चं मरणातो भय ।

सायमेके न दिस्सन्ति पातो दिट्ठा चण्डणा ।

पातो एके न दिस्सन्ति सारं दिट्ठा चण्डणा ।

परिदेवयमानो चे क्खिच्चदत्थमदब्धे ।

सम्भूलटो हिममत्तान कयिग चैन विचरग्गणो ।

किमो विवखणो भयति हिममत्तानमत्तनो :

न तेन पेता पालेन्ति निग्गया परिदेवना ।

यथा मरणादिच्चं वारिना परिनिवरे :

एवगिप धीरो मुत्वा मेधावी पण्डितो नो ।

रिग्गमुपरित्तं सोर वातो नूल व धमये ।

एग्गोव मच्चो द्रच्चेति एग्गोव जातं कुल ।

सञ्जोगपग्मा त्वेव सम्भोगा सव्वपाणिन ,
 तस्पाहि धीरस्स बहुस्सुतस्स सम्पस्सतो लोकमिम पग्ञ्च ,
 अञ्जाय धम्म हट्थं मनञ्च सोका महन्तापि न तापर्यान्ति ।

सोह दस्सञ्च मोक्खञ्च भरिस्सामि च जातके ;
 सेस सम्पालयिस्सामि विच्चमेवं विजानताति ।'

इमाहि गाथाहि अनिच्चत पकामेसि ।

परिसा इमं रामपरिडितस्म अनिच्चतापकामनि धम्मदेसन सुत्वा
 निस्सोका अहोसि । ततो भरतकुमारो रामपरिडितं वन्दित्वा 'वाराण-
 सिरञ्ज पटिच्छथा—ति' आह । 'तात, लक्ष्मणञ्च सीतादेविञ्च,
 गहेत्वा रञ्ज अनुसासथा—ति ।' 'तुम्हे पन देवाति ?' 'तात, मम पिता
 द्वादस वस्सच्चयेनागन्त्वा रञ्जं करेय्यासीति' मं अवोच, अह इदानेव
 गच्छन्ता तस्स वचनकरो नाम न होमि । अञ्जानि पन तीणि वस्सानि
 अतिक्रमिन्त्वा आगमिस्सामीति ।' एत्तक कालं को रञ्जं कारेस्सतीति ?
 'तुम्हे करोथाति ।' 'न मय कारेस्सामाति ।' 'तेन हि याव मम आगमना
 इमा पादुका कारेस्सन्तीनि' अचनो तिणपादुका आमुञ्चत्वा अदासि ।
 ते तयापि जना पादुका गहेत्वा परिडित वन्दित्वा महाजनपरिवुता वारा-
 णसि, अगमसु । ताणि सवच्छरानि पादुका रञ्जं कारेसुं । अमच्चा
 तिणपादुकाराजपल्लङ्के ठपेत्वाअट्टं विनिच्छिनन्ति । सचे दुब्बिनिच्छितो
 होति, पादुका अञ्जमञ्ज पटिहञ्जन्ति, ताय सञ्जाय पुन विनिच्छि-
 नन्ति । सम्माविनिच्छितकाले पादुका निस्सहा सन्निसीदन्ति । परिडितो
 तिणण सवच्छरानं अच्चयेन अरञ्जा निक्खमित्वा वाराणसिनगर पत्वा
 उय्यानं पविसि । तस्सागतभावं अत्वा कुमारा अमच्चपरिवुता उय्यान
 गन्त्वा सीतं अग्गे महेसि क्त्वा उभिन्नम्पि अभिमक करिसु । एव
 अभिमकपत्तो महासत्त्वो अलङ्कतरथे ठत्वा महन्तेन परिवारेण नगरं
 पविसित्वा पदक्खिणं क्त्वा सुचन्दकपासादवरस्स महातलं अभिरुद्ध
 ततो पट्टाय सोलसवस्ससहस्सानि धम्मेन रञ्जं करित्वा सग्गपदं पूरेसि ।

दमनस्ममहस्मानि मट्टिचम्म म्नानि च .
कम्बुगीषो मद्रावाहृ गभी रज्जमरस्योति .

राजोवादजातक

श्रुतीति वाराण्ण्यिय ब्रह्मदत्ते रज्ज कारन्ते प्रायिना एव प्रम-
मंरतिया कुच्छिस्मि पटिसन्धि गन्वा लत्ररुचनपरिभाषा १११ ना
मानुकुच्छिम्ना निम्बमि । नामगदगुट्टिने पनम् प्रगदसकुभागे ११२
नाम अकसु । सा अनुपुञ्जेन वयपरत्ता मीलमयमराल एतयसि ।
गन्वा सव्यमिपेसु निन्कति पत्या रिनु अन्वयेन रज्ज रनिद्रय धम्मेन
समेन राज्ज कारेति, छन्दादिवम्मेन अगत्या विनिद्रय एवममि ।
तस्मि एव धम्मेन रज्ज कारेन्ते अमन्वारि धम्मेनय रोगे विनि-
च्छिर्निंसु, बोहारंसु धम्मेन विनिच्छयमानंसु कृट्टकार्या नाम नागने
तेमं अमावा अदृत्थाय राज्जणे उपरवा पच्छिद्र । अमन्वारि विपमं
पि विनिच्छयदाने निमीदित्वा केचि विनिच्छयदान एवमन्वारि
अदित्वा पक्षनन्ति । विनिच्छयदान छट्टे सव्यभाषा य पति । अमिनी
चिन्तेमि: “भाय धम्मेन रज्ज कारन्ते विनिच्छयदान एवमन्वारि
नाम नत्थि, उपरयो पच्छिद्रिज्ज । विनिच्छयदान छट्टे सव्यभाषा
पत्त, ददानि मया अत्तनो अगुन पच्छिद्रिं । एता, अत्त नाम
ने अगुणो’ ति अत्ता त पहाय गुणेनु देव गणेम्माना । एता
पहाय “अत्थि नु म्या ने कान्चि अगुणवादाति’ पच्छिद्रिं एवमन्वारि
वलज्जान अत्तरे कन्चि अगुणवादि अत्थिना अत्तनो एवमन्वारि
सुत्वा ‘एते मय भयेनारि अगुणं अत्तना गुणमय वदन्ते’ ति काट
वलज्जनके परिगसन्ता तत्रापि अदिमा अत्ता नगरे परिगसन्ता,
अदिनगरे चनुसु द्वारंसु द्वारगामके परिगसि । तासां एव एवमन्वारि
वादि अदित्वा अत्तनो गुणमयमेव एवमन्वारि एवमन्वारि
मीति’ अमन्चे रज्जं पटिच्छापेत्वा एव एवमन्वारि एवमन्वारि
अज्जातकवेमेन नगरा निक्षयमित्वा एवमन्वारि एवमन्वारि

पञ्चन्तभूमि गत्वा कञ्चि अगुणवादि अदिस्वा अत्तनो गुणकथ-
मेव सुत्वा पञ्चन्तसीमतो महामग्गेन नगरामिमुखो येव निवत्ति ।
तस्मि पनकाले मल्लिको नाम कोसलराजापि धम्मेन रज्जं कारेन्तो
अगुणगवेमको हुन्वा अन्तोत्रलज्जकादिसु अगुणवादि अदिस्वा अत्तनो
गुणकथमेव सुत्वा जनपदं परिगणहन्तो त पदेस अगमासि । ते
उभो पि एरुस्मि निन्ने सकटमग्गे अमिमुखा अहेसुं । रथस्स उक्क-
मनट्टानं नत्थि । अथ मल्लकरज्जो सारथि वाराणसिज्जो सारथि
'तव रथं उक्कमापेहीत' आह । सोपि 'अम्मो सारथि तव रथं उक्कमा
पेहि, इमिस्मि रथे वागणसिज्जसामिको ब्रह्मदत्त महाराजा निसिन्नोति'
आह । इतरोपि 'अम्मो सारथि इमस्मि रथे कोसलरज्जसामिको
मल्लिकमहाराजा निसिन्नो, तव रथ उक्कमापेत्वा अम्हाकं रज्जो
रथस्स ओकासं देहीति' आह । वागणसि रज्जो सारथि 'अयं पि किर
राजा येव किन्नु खो कातव्वंति चिन्तेतो' 'अत्थेस उपायोः वयं पुच्छित्वा
दहरतरस्स रथं उक्कमापेत्वा महल्लकस्स ओकासं दापेस्सामीति' सन्निट्टानं
क्त्वा त सारथि कोसलरज्जो वयं पुच्छित्वा परिगणहन्तो उभिन्नमि
समानवयभाव अत्वा रज्जपरिमाणं बलं धनं यसं जाति गोत्त-कुलाप-
देसं ति सब्ब पुच्छित्वा 'उभोपि तियोजन-मतिकस्स रज्जस्स सामिनो
समान बल धन यस जाति गोत्त कुलापदेसाति' अत्वा सीलवन्ततरस्स
ओकास दस्सामीति चिन्तेत्वा सो सारथि 'तुम्हाकं रज्जो सीलाचारो
कीदिसो' ति पुच्छि । सो 'अय च अय च अम्हाकं रज्जो सीलाचारोति'
अत्तनो रज्जो अगुणमेव गुणतो पकासेन्तो पठमं गायमाह—

दढं दढस्स खिपति मल्लिको म्हुना मुहुं ;

साधुमि साधुना जेति असाधुमि असाधुना ।

एतादिसो अयं राजा मग्गा उय्याहि सारथीति ।

तत्थ दढं दढस्स खिपतीति—या दढो होति बलवदटेन पहारेन वा
वचनेन वा जिनितव्वो तस्स दढमेव पहारं वा वचन वा खिपति एवं

ददो ह्रुत्वा त जिनातीति दस्मेति, मल्लिकोति तत्स रज्जो नाम, मुदुना मुदुन्ति, मुदुपुगल सयम्पि मुदु ह्रुत्वा मुदुनाव उपायेन जिनाति । साधुम्पि साधुना त्रेति असाधुम्पि असाधुना ति ये साधु मपुग्मिमा तं सयम्पि साधु ह्रुत्वा साधुनाव उपायेन, ये पन असाधु, तं सयम्पि असाधु ह्रुत्वा असाधुनाव उपायेन जिनातीति दस्मेति, एतादिसो अय गजा ति अय अग्नाकं कोसलराजा सीताचारेण एव रूपो, मग्गा उय्याहि मारथीति अत्तनो रथ मग्गा उक्कमापेत्वा उय्याहि. उय्येन याहीति अग्नाक रज्जो मग्गा देहीति वदति ।

अथ त वाराणसिरज्जो सारथि 'अग्नाको, किं पन तथा अत्तनो रज्जो गुणा कथिता' ति बत्वा 'अग्नाको' वुत्ते यदि एते गुणा अगुणा पन कीदिसाति बत्वा 'एते ताव अगुणा होन्तु, अग्नाक पन रज्जो कीदिमा गुणा' ति वत्ते 'तेन हि सुणाहीति' वुत्तिर्यं गाथमाह—

अक्कोधेन जिने कोध असाधुं साधुना जिने,
जिने कदरिय दानेन सच्चेनालीकवादिन ।

एतादिसो अय राजा मग्गा उय्याहि मारथीति ।

तस्य एतादिसो ति एतेहि अक्कोधेन जिने कोधन्ति आदियमेन वुत्ते हि गुणेहि समन्नागतो, अय हि कुद्धं पुगल सय अक्कोधो ह्रुत्वा अक्कोधेन जिनाति, असाधुं पन सयं साधु ह्रुत्वा साधुना, कदरिय अन्धमन्त्रि सय दायको ह्रुत्वा दानेन, अलीकवादिन मुसावादि मय मच्चवादी ह्रुत्वा मच्चेन जिनाति; मग्गा उय्याहीति सय मारथि मग्गतो अन्धमच्छ एव-विधसीलाचारगुणयुत्तस्स अग्नाक रज्जो मग्गा देहीति अग्नाक राजा मग्गस्स अनुच्छविकोति ।

एवं वुत्ते मल्लिकराजा च सारथि च उभोपि रथं श्रोतवित्वा अस्मे मोचेत्वा रथं अपनेत्वा वाराणसिरज्जो मग्गा अदंसु । वाराणसिराजा मल्लिकरज्जो नाम 'इदञ्च इदञ्च कातुं वदतीति' श्रोत्वा दत्त्वा वाग-णसि गन्त्वा दानादीनि पुज्जानि क्त्वा जीवितपन्निप्राप्ताने मग्गावदं

पूरेसि । मल्लिकराजापि तस्स श्रोवाद गहेत्वा जनपद परिग्गहेत्वा
अत्तनो अगुणवादि अदिस्वा व सक्कनगर गन्त्वा दानादीनि पुज्जानि
कत्था जीवितपरियोसाने सग्गपदमेव पूरेसि ।

महोसधस्स आवाहो

ततो पट्टाय बोधिसत्तस्म यसो महा अहोसि । तं सब्ब उदुम्बरा
देवी येव विचारेति, सा तस्स सोलसवस्सकाले चिन्तेसि: “मम कनिष्ठो
महल्लको जातो, यसोपिस्स महा, आवाहमस्म कातुं वड्ढतीत,” सा
रज्जो तमत्य आरोचेसि, राजा त मुत्वा सोमनस्सप्यत्तो हुत्वा “साधु,
जानापेहि निन्’ ति आह, सा त जानापेत्वा तेन सम्पटिच्छित्ते “तेन
हि तात कुमारिक आनेमां” ति आह, महोसधो ‘कदाचि इमेहि आ-
नीता मम न रुचेय्य, सयमेव ताव उप-रिमीति’ चिन्तेत्वा एवमाह: ‘देवि
कतिपाह मा किञ्चि रज्जो वदेथ, अहं एक दारिवं मयं परियेसित्वा
मम चित्तरचितं तुम्हाकं आचिक्खिस्सामीति’ “एवं करोहि ताता” ति.

सो देवि वन्दित्वा अत्तनो घर गन्त्वा सहायकानं सज्ज अदत्वा
अज्जतरवेसेन तुन्नवायउपकरणान गिहेत्त् । एकको व उत्तरद्वारेण निक्ख-
मित्वा उत्तरद्वारयवमज्झकं पायासि । तदा पन तत्थ पुराणसेट्टिकुलं
परिनिष्णं अहोसि, तस्म कुलस्स धीता अमरादेवी नाम अभिरूपा
सब्बलक्खणसम्पन्ना पुज्जवती मा त दिवस पातो व यागुं पचित्वा
आदाय ‘पितु कम्मनट्टानं गमिस्सामीति, निक्खमित्वा तमेव मग्गं
पटिपज्जि । महासत्तो त आगच्छन्तिं दिस्वा लक्खणसग्गप्पन्ना इत्थी,
स चे अपरिग्गहा इमाय मे पाटपरिचाराकाय भवितुं वड्ढतीत चिन्तेसि ।
सापि तं दिस्वा व ‘स चे एवरूपस्स पुरिसस्स गेहे भवेय्य सक्का सिया
कुट्टुम्यं सएठपेटुन्’ ति चिन्तेसि, अथ महासत्तो ‘इमिस्सा सपरिग्गह-
अपरिग्गहभाव न जानामि, हत्थमुहाय न पुच्छिस्सामि, सचे परिडता
भविस्सति’ जानिस्सतीत’ चिन्तेन्तो दूरे ठितोव मुट्ठिं अकासि सा ‘अयं
मे सस्सामिकभावं पुच्छतीति’ अत्वा हत्थं विकासेसि । सो अत्वा

समीप गत्वा 'भहे, का नाम त्वन्' ति पुच्छि 'मामि, अह अतीता-
नागते वा एतरहि वा य नत्थि तं नामिका' ति भहे, लोके अमग्नाम
नत्थि, त्व अमरा नाम भविस्ससीति 'एवं मामीति' 'भहे, कम्म यागुं
हरसीति' 'सामि, पुब्बदेवताया' ति 'पुब्बदेवता नाम माता पितगे,
तव पितु हग्गिस्समि मज्जे' ति 'एव भविस्सति मामीति' तव पिता कि
करोतीति' 'एक द्वे करोतीति,' 'एकस्स द्विधाकरण नाम कम्म, कम्मि
भहे' ति 'एव सामीति,' 'कम्मि पन ठाने ते पिता कर्माति' 'यत्थ मरि
गता न येन्तीति,' 'सकि गतान न पच्चागमनट्टान नाम मुमान. मुमा-
नसन्तिके कसति भहे' ति, 'एव सामाति,' 'भहे, अज्जेव एस्समाति'
स चे एस्सति न एस्सामि, नो चे एस्सति एस्सामीति 'भहे, पिता ते
मज्जे नदीपारे कसति, उदके एन्ते न एस्समि, अनेन्ते एम्ममीति'
'एव सम्मीति,' एत्तक अल्लापनत्ताप कन्था अमरादेवी 'यागुं पिबिस्समि
सामीति', निमन्तेमि । महामत्ता पाटविलपन नाम अमन्लन्ति
चिन्तेत्वा 'आम, पिबिस्सामीति' आह मा यागुघट ओताग्गि ।
महारत्तो 'सचे पाति अधोवित्था हत्थधावन अट्ठत्वा व टस्सति
एत्थेव न पहाय गमिस्सामीति' चिन्तेमि । सा पन पातिगा उदकं
आहग्गित्वा हत्थधोवन दत्त्वा तुच्छयाति हत्थे अठपेत्वा भूमिग रत्त्वा
घट आलोलोत्वा यागुया पूरेसि, तत्थ पन मित्थानि मन्टानि, अथ न
महासत्ता आह, 'कि भहे अति बहला यागुं' ति, 'उदक न लद्ध
सामीति' 'केदारेहि उदकं न लद्ध' भविस्सति मज्जे' ति. मा 'एवं
सामीति' 'पितु यागुं ठपेत्वा बोधिमत्तस्स अदामि, मो पिबित्वा सुग्गं
विवखालोत्वा 'भहे, मय तुम्हाक नेह गमिस्साम, नग्ग नो
आचिक्खाति' आह, सा 'माधू' ति वत्वा तस्स भग्गं आचिक्खित्वा
पितु यागुं गहेत्वा अगमासि ।

सो ताथ कथितमग्गेन त नेह गतो, अथ न अमरादेविगा माता
दिस्वा व आसन दत्त्वा 'यागुं वड्ढेमि सामीति' आह । 'अग्ग,

कनिष्ठभगिनिया मे अमरादेविया थोका यागु दिन्ना' ति, सा 'धीतु मे अत्याय आगतेन भवितव्वं' ति अज्जासि । महासत्तो तेसं दुग्गतभाव जानन्तोपि 'अम्म, अह तुन्नवायो, अत्थि किञ्चि सिवितव्वन्' ति, 'मामि, अत्थि, मूलं पर नत्थीति' । 'अम्म, मूलेन कम्मं नत्थि, अनेथ, सिब्बिस्सामीति' मा जिण्णकानि पिलोतकानि आहरित्वा अदासि, चोधिसत्तो आहटाहटं निट्ठपेसि येव, पञ्जवन्तान क्रिरिया नाम इज्झति । अथ नं 'अम्म, वीथिसभागान आरोचेहीति' आह, सा सकलगामे आरोचेसि । महासत्तो तुन्नकम्म कत्वा एकाहेनेव सहस्स उप्पादेसि । महत्तिकापि स्स पातरासमत्तं पचित्वा ढत्वा सायं 'तात-कित्तक पचाभीति' आह । 'अम्म, यत्तका इमस्मिं गोहे भुज्जन्ति तस पमाणेना' ति, सा अनेकसूरव्यञ्जन बहुभत्तं पचि ।

अमरादेवी पि सायं सीसेन दारुकलाप उच्छगेन पण्ण आदाय अरञ्जतो आगन्त्वा पुरे द्वारे दारुनि निखिपित्वा पच्छिमद्वारेण गेह पाविसि । पिता पनस्सा सायतर आगमि । महासत्तो न नग्गरसेपि भुञ्जि, इतग मातापितरो भोजेत्वा पच्छा भुञ्जित्वा माता-पितुन्नं पादे धोवित्वा महासत्तस्स पादे धोवि । सो त परिगणहन्तो कतिपाहं तथेव वसि । अथ नं वीमसन्तो एकदिवस आहः 'भहे अमरादेवि, अड्ढनालिकमत्तं तण्डुलं गहेत्वा ततो मय्ह यागुञ्च पूवञ्च भक्कञ्च पचाहीति' । सा 'माधू' ति सम्पटिच्छित्वा ते तण्डुले कोट्टेत्वा मूलतण्डुलेहि य.गुं मज्झिमतण्डुलेहि भत्तं कथिक्काहि पूर्वं पचित्वा तदनु रूपं व्यञ्जनं सम्पादेत्वा महासत्तस्स सव्यञ्जनं यागुं अदामि । यागु मुखे ठापितमत्ताव रसहरणियो फरित्वा अट्ठासि । सो तस्सा वीमस-नत्थमेव 'भहे, पचित्तुं अजानन्ती किमत्थं मम तण्डुले नासेधीति' यागुं सह खेत्तेन निट्ठु भित्त्वा भूमिय पातेसि, सा अकुञ्जित्वा व 'रुचे यागु न मुन्दरा पूर्वं खाद सामीति' पूव अदासि । तमिपि तथेव अकासि । भत्तेपि तथेव पटिपजित्वा 'त्वं पचित्तुं अजानन्ती मम सन्तकं किमत्थ

नामैसीति' क्रुद्धो विद्य तीणि पि एकतो महित्वा तस्मा मीमतो पट्टान सकलसरीरं विलिम्पित्वा 'द्वारे निमीढाति' आह । सा अक्रुञ्चिन्वा व 'साधु सामीति' तथा अकामि । सो तस्मा निहतमानभाव जत्वा 'भहे एहीति' आह । सा एकवचनेनेव आगता ।

महासत्तो पन आगच्छन्तो वनापणसहस्मेन मद्धि एर माटक. तम्बूल-गसिन्वके ठपेत्वा आगतो । अथ सां त माटक नीहृत्वा तस्मा हत्ये ठपेत्वा 'भहे तव महायिकाहि सद्धि नहायित्वा इम माटकं निवामेत्वा एहीति' आह । सा तथा अकामि । पण्डितो उपादितवनञ्च आहटधनञ्च सब्य तस्सा म.तापितुञ्च दत्त्वा ते समम्मानेत्वा त आदाय नगरमेव गन्त्वा वीममनत्थाय त दोवारिकस्स गेहे निमीढा-पेत्वा दोवारिकभरियाय आन्विखित्वा अत्तनो निर्वमन गन्त्वा पुग्मि आमन्तेत्वा 'असुकगेहे इत्थि ठपेत्वा आगतो' गिह, उमं मग्म आदाय गन्त्वा त वीमसथा ति महस्म दत्त्वा पेमेमि । ते तथा वग्मि । सा 'इम मम सामिकस्स पाटज न अग्घताति न' इच्छि । ते गन्त्वा पण्डितस्स आरोचेसुं । पुनपि यावततिथ पेनेत्वा चतुत्थे वारे 'तेन ति त हत्ये गहेत्वा क्खन्ता आनेथा' ति अह । ते तथा वग्मि । सा मग्म-सत्त महासम्पत्तिय ठित न सज्जानि, ओलेकेत्वा च पन हग्मि चैव गेदि च । सा उभिन्नग्मि कारण पुच्छि । अथ न सा एवमाह मामि अह हग्म-माना तवसम्पत्ति आलेकेत्वा 'अथ सम्पत्ति न अका.णेन लज्जा, पुग्मि-भवे पन कुसल कत्वा लद्धा भविस्म.ति अग्गे पुज्जान पल्ल नामाति हसि, रोदमाना पन इदानि पग्मस्स रविखतगोपितवत्थुग्मि प्रप-ग्मिन्त्वा निग्म गमिस्मतीति तथि कारुज्ज न गेदिन्' ति । सो त वीमंसित्वा सुद्धभावं जत्वा 'गच्छथ, न तत्येव नेथा' ति वत्ता पेनेत्वा पुन तुन्नवाथवेस गहेत्वा गन्त्वा ताय सद्धि त रत्ति सत्तिवा पुनदिवसे पातो व राजकुल पविसित्वा उदुम्बरा देविया आरोचेसि । सा उज्जो आरोचेत्वा अमरादेवि सबलकारेदि अलंकरित्वा महायोग्गे निर्म दा-

पेत्वा महन्तेन सक्कारेन महासत्तस्य गेहं आनेत्वा मङ्गलं कारेसि । गजा बोधिसत्तस्स सहस्समूलं पख्याकार पेमेसि । दोवारिके आदि क्त्वा सकलनगरवासिनो पख्याकारे पहिण्णिसु । अमरादेवी रञ्ज पद्धितं पख्याकारं द्विधा भिन्दित्वा एकं कोट्टास रञ्ज पेमसि । एतेनुपायेन मकलनगग्वासीनम्मि पख्याकार पेमेत्वा नगरं संगसिइ । ततो पट्ठाय महासत्तो ताय सद्धि समग्गवासं वसन्तो रञ्ज । अत्थञ्च धम्मञ्च अनुसासि ।

महोसधस्स विनिच्छयो

एका इत्थी पुत्तं आदाय मुखधोवनत्थाय परिडतस्स पोक्खरिणीं गन्त्वा पुत्तं नहापेत्वा अत्तनो साट्ठे निसीदापेत्वा मुख धोवित्वा नहायितुं श्रोतरि । तस्मिं खणे एका यक्खिनी न दारकं दिस्वा खादितुकामा हुत्वा इत्थिवेसं गहेत्वा 'महादिके, सोभति वताय दारको, तवेसो पुत्तो' ति पुच्छित्वा 'आम, अम्मा' ति बुत्ते 'पायेमि नन् ति क्त्वा 'पायेही' ति बुत्ता तं गहेत्वा थोकं कीलापेत्वा तं आदाय पलायितुं आरभि । दतगा तं दिस्वा धावित्वा 'कुहिं मं पुत्तं नेमी' ति गसिइ । यक्खिनी 'कुतो तथा पुत्तो लद्धो, ममेमो पुत्तो' ति आह । ता कलहं करोन्तियो सालद्वारेण गच्छन्ति । परिडतो कलहमहं सुत्वा ता पक्कोसित्वा 'किमेतन्' ति पुच्छित्वा अट्ठ सुत्वा अक्खीनं अनिमिसताय चैव रत्तताय च यक्खिनि यक्खिनीति जत्वापि 'मम विनिच्छये ठस्सथा' ति क्त्वा 'आम ठस्सामा' ति बुत्ते लेखं कड्ढित्वा लेखामध्ये दारकं निपज्जापेत्वा, यक्खि-निया इत्थेसु मातगा पादेसु गाहापेत्वा 'द्वेपि आकड्ढित्वा गरहथ, कड्ढित्तुं सक्कोन्तिया एव पुत्तो' ति आह । ता उभोपि कड्ढिसु । दारको कड्ढियमानो दुक्खपत्तो हुत्वा विग्गि । माता हृदयेन फलितेन विय पुत्तं मोचेत्वा रोदमाना अट्ठसि । परिडतो महाजनं पुच्छि 'दारके मातुहृदयं सुद्धुं होति उताहु अमातुहृदयन्' ति । 'मातुहृदयं परिडता' ति । 'इदानि किमेतं दारकं गहेत्वा ठिता माता होति विस-ज्जेत्वा ठिता' ति । 'विसज्जेत्वा ठिता परिडता' ति । 'इमं पणं दारकं

चोरि तुम्हे जानाया' ति । 'न जानाम पण्डिता' ति । 'अविश्वनी एमा, दागकं खादितुं गरिह' ति । 'कथ जानामि पण्डिता' ति । 'अन्धनी अनिमिमताय च व रत्ताय च छायाय अभावन च निगमन्ताय च निक्करुणताय चा, ति । अथ न पुच्छि 'कामि त्वन्' ति । यमिष्वनिम्ह सामी' ति । 'कस्मा इम दारक गरिह' ति । 'खादितुं मामी ति । 'अन्धवाले, पुत्रेपि पापक कत्वा अविश्वनी जातामि इदानी पुनपि पाप करोमि, अहो अन्धवालासी' ति आवदिशा पञ्चनु मीनेनु पतिट्टापेत्वा उय्योजेमि । दारकमाता 'चिरजीव मामी' ति पण्डित थानेन्वा पुत्तं आदाय पक्कामि ।

चुल्लकसेट्टि

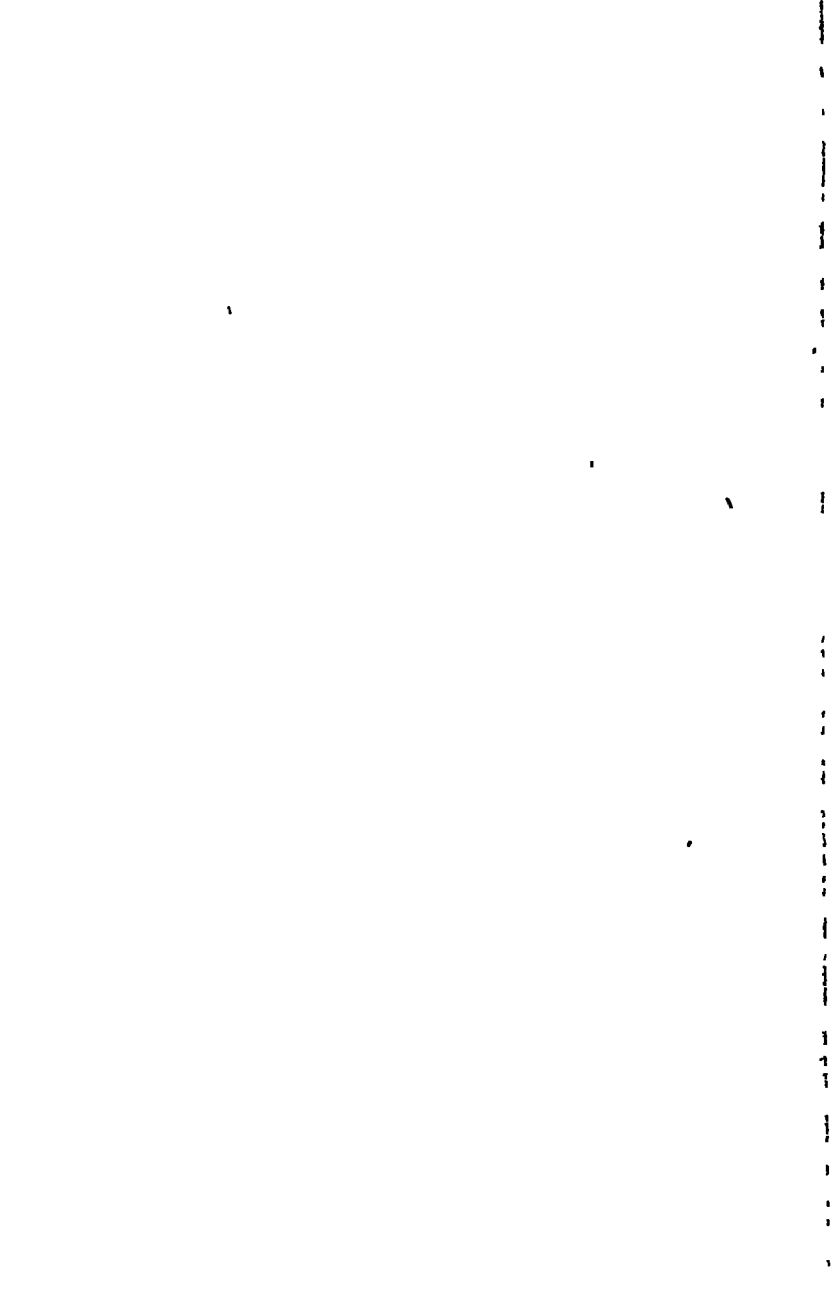
अतीते कासि ग्हे वाराणसिय ब्रह्मदत्ते ग्ज कारन्ते बोधिमत्ता सेट्टि-कुले निवृत्तित्वा वयपत्ता मेट्टिट्ठान लमित्वा चुल्लकसेट्टि नाम अहासि सो प गहतो व्यत्ता मवनिमित्तानि जानाति । सो एवदिवसं राजूपट्ठान गच्छन्तो अन्तरबोधिय मतमूमिक दिस्वा त खणे नयत्त समानेत्वा इदमाह. 'सक्का चक्खुमता कुलपुत्तेन इम उन्दुर गेत्वा दाराभरण वा कातुं कम्मन्ते च पयाजेजुन्' ति । अग्नताग दुग्गत-कुलपुत्तो त सेट्टिस्स वचनं सुत्वा नाय अजानित्वा रुपेस्समी' ति, नमिक गहेत्वा एकस्मिं आपणे बिडालस्सत्थाय दत्ता काकणिक लमि । ताव काकणिकाय फणित गहेत्वा एनेन कुटेन पानीयं गरिह । सो अरञ्जतो आगच्छन्त मालाकारे दिस्वा थोक 'गेकं फणितरग्गट दत्त्वा उलुंकेन पानीय ददाति । तं तस्स एकेकं पुष्फमुट्टि अटंनु । सो तन पुष्फमूलेन पुन-दिवसेपि फणितञ्च पानीयघटञ्च गहेत्वा पुकारग्गनेव गतो । तस्स त दिवसे मालाकारा अट्टाचित्ते पुष्फगुच्छ दत्त्वा गग-मसु । सो नचिरस्से व इमिना उपायेन अट्टकहापणे लमि ।

पुन एकस्मि वातबुद्धिदिवसे राजुय्याने बहू सुखदण्डरा च साखा च पलास च वातेन पतित होति । उय्यानपालो छट्टेतुं उपाय न

पस्सति । सो तत्थ गन्त्वा 'स चे इमानि दारुपरणानि मय्ह ढम्मसि
अहन्ते इमानि सब्बानि नीहरिस्सामी' ति उय्यानपालमाह । सो
'गरह अय्या' ति सम्पटिच्छि । चुल्लन्तेवासिको दारकानं केलिमण्डल
गन्त्वा फाणितं दत्ता मुहुत्तेन सब्बानि दारुपरणानि नीहरापेन्त्वा
उय्यानद्वारे रप्पि कारेसि । तदा राजकुम्भकारो राजकुलान भाजनानं
पचनत्थाय दारुनि परियेसमानो उय्यानद्वारे तानि दिस्वा तस्स हत्थतो
विक्किणित्वा गरिह । त दिवम चुल्लन्तेवासिको दारुविक्रयेन सोत्तस
कहापणे चाटिआदीनि च पञ्च भाजनानि ह मि । सो चतुवीसतिया
कहापणेषु जातेसु 'अत्थि अय उपायो मय्हन्' ति नगरद्वारतो अविदू-
ग्ढाने एक पानीयचाटि ठपत्वा पञ्चसते तिण्हारके पानीयेन उपट्ठहि ।
ते आहसुः 'त्वं सम्म अम्हाक वहुयकारो, किन्ते करोमा' ति । सो 'मय्हं
किञ्चे उप्पन्ने करिस्सथा' ति वत्वा इतो चितो च विचरन्ता यत्तपथक-
म्मिकेन च जलपथकम्मिकेन च सद्धि मित्तसन्थव अकासि । तस्स यत्त-
पथकम्मिको 'स्वे इम नगर अस्स वाणिजको पञ्च अस्मसतानि गहेत्वा
आगमिस्सती' ति आचन्नि । सो तस्स वचन सुत्वा तिण्हारके आह
'अज्ज मय्ह एकेक तिण्हकलाप देथ, मया च तिणे अविक्कीते अत्तनो तिण्हं
मा विक्किणथा' ति । ते 'माधू' ति सम्पटिच्छित्त्वा पञ्च तिण्हकलाप स-
तानि आहरित्वा तस्स घरे पातयिसु । अस्सवाणिजो सकलनगरे अस्सान
तिण्हं अलमित्वा तस्स सहस्सं दत्त्वा तं तिण्ह गरिह । ततो कतिपाहच्चयेन
तस्स जलपथकम्मिकसहायको आरोचेमिः 'पट्टन महानावा आगता'
ति । सो 'अत्थि अय उपायो' ति अट्ठहि कहापणेहि सब्बपरिवारस-
म्पन्नं तावकालिक रथ गहेत्वा महन्तेन यसेन नावा पट्टन गन्त्वा एकं
अङ्गुलिमुद्दिकनावा सच्चकार दत्त्वा अविदूग्ढाने साणि परिकिण्णपा-
पेत्वा निसिन्नो पुरिसे आणापेसिः 'वाहिरतो वाणिजेषु आगतेसु
ततियेन पाटिहारेण आरोचेया' ति । 'नावा आगता ति सुत्वा
वाराणसितो सतमत्ता वाणिजा 'भण्डं गरहामा' ति अगामिसु ।

‘भयङ्गं तुम्हे न लभिस्सथ, अमुकद्वाने नाम महावाणिजेन सच्चक्रागे दित्रां’
 ति । ते तं सुत्वा तस्स सन्तिक आगता । पादमूलिकपुग्गिमा पुग्गिमा
 सञ्जावसेन ततियेन पाटिहारेण तेम आगतभाव आगेचेमु । तं मत्त-
 मत्तापि वाणिजा एकेक सहस्स दत्त्वा तेन मद्धि नावाय पत्तिका हुत्त्वा
 पुन एकेकं सहस्स दत्त्वा पत्ति विसज्जापेत्त्वा भगट अत्तनो मन्तर-
 अकसु । चुल्लजन्तेवामिको द्वे मत्तसहस्मानि गाग्घेत्त्वा वागग्गमि
 आगन्त्वा ‘कत्तञ्जुना भवितुं वट्ठती ति एक मत्तसहस्स गाग्गपेत्त्वा
 चुल्लुकसेट्ठिस्स समाप गतो । अथ नं मेट्ठि ‘किन्ते तात वत्त्वा इद धनं
 लद्धन्’ ति पुच्छि । सो ‘तुम्हे कथितउपाये ठत्त्वा चतुमासअभन्तरे-
 नेव’लद्धन्’ ति मत्त मूसिक आदि कत्ता सव्वं वत्थु कथेमि । चुल्ल-
 महासेट्ठि तस्स वचन सुत्वा न टानि एवरूप दारक परमन्तर वानुं
 वट्ठती ति वथयत्तं धीतर दत्त्वा सत्तलकुट्टुम्भस्स मामिक अरामि ।
 सो सेट्ठिनो अच्चयेन तस्मि नगरे मेट्ठिट्ठान लभि । बोधिसत्तोपि यथा-
 कम्म अगमासि । सम्मासम्बुद्धोपि इम धम्मदेसन कथेत्त्वा अभिमम्बुद्धो
 व इम गाथ कथेसि—

अप्यकेन पि मेधावी पाभतेन विचवस्सणो :
 समुदापेपि अत्तान अणुं अग्गीव मन्थमन्’ ति ।



शब्द-कोष

अ

अकतञ्जू—अकृतज, उपकार न माननेवाला ।

अगतिगमन—कुमार्ग से चलना ।

अग्गमहेमी—अग्रमहिषी, प्रधान पट्टगनी ।

अट्ट—अर्थ, मुरुहमा ।

अतिवृत्ति—अतिवर्तते, अतिक्रमण करता है ।

अनवच्छ—अनवच, दोष रहित ।

अनुपुट्वेन—आनुपूर्व्येण, क्रमशः ।

अञ्जःत्तित्वा—अध्यवस्तीर्य, तीर्ण करके ।

अन्तमसो—अन्ततः ।

अरिय—आर्य, श्रेष्ठ ।

असुक—अमुक ।

अहोसि—अभूत्, हुआ ।

आ

आदिचो—आदित्यः, सूर्य ।

आचरिय—आचार्यः ।

आणा—आजा ।

आरवल—आरक्ष, रक्षा ।

आबुव—आयुध, शस्त्र ।

इ

इत्थि—झी ।

इस्तर—ईश्वर ।

इदानि—इदानीम्, इस समय ।

इध—इह, यहाँ ।

इद्धि—ऋद्धि ।

उ

उकमन—उत्क्रमण, निकलना ।

उद्धान—उत्थान, उठना ।

उत्तमङ्ग—उत्तमाङ्ग, तिर ।

उन्दुर—इन्दुर, मूषक ।

उत्तलं—उत्पलम्, कमल

ऊ

ऊका—यूका, जूँ ।

ए

एकमन्तं—एकान्ते, एक किनारे ।

एतादिस—एतादृश, इस प्रकार का ।

एत्तक—एतावत्, इतना ।

ओ

ओकास—अवकाश, स्थान ।

ओपरञ्ज—यौवराज्य ।

ओवाद—अववाद, उपदेश ।

ओहीनक—अवहीनक, बेंचे हुए ।

क

कत—कृत, किया गया ।

कतिपाहं—कतिपयाहम्, कुछ दिन ।

कम्मर—कर्मार, लोहार ।

कसिं—कृषि ।

- कातब्बो—कतव्यः, करने योग्य ।
 कारुज्ज—कारुण्य, दया ।
 कालमकामि—कालम अकार्पात्, मर गया ।
 कित्तक—कियत्, कितना ।
 किगिया—क्रिया ।
 कुच्छिस्मि—कुक्षी, कांख मं ।
 कुब्भति—कुभ्यति, क्रोध करता है ।
 कोचि—कश्चित्, कोई ।
 कोसिय—कौशिक, उल्लूक ।

ख

- खत्तियो—क्षत्रियं ।
 खन्ति—क्षान्ति, क्षमा ।
 खन्धावार—स्फन्धावार, मेना ।
 खज्जोपनक—खद्योतनक, जुगनू, कौटा ।
 खिप—क्षिप्रम्, शीघ्र ।
 खीयति—क्षीयत, नीच होता है ।
 खुद्द—क्षुद्र, छोटा ।

ग

- गण्डि—अग्रहीत्, ग्रहण किया ।
 गन्त्वा—गत्वा, जाकर ।
 गन्धो—गर्भः ।
 गवेसितुं—गवेपितुं, दूँढने के लिये ।
 गाहापेत्वा—ग्राहयित्वा, ग्रहण कराकर ।

घ

- घातापेति—घातयति, वध कराता है ।
 घोसेति—घोषयति, घोषणा कराता है ।

च

चतसु—चतुर्षु, चार में ।

चागो—त्यागः ।

चिण्ण—चोर्ण, विचरण किया गया ।

छ

छद्दम—पट्ट, छठा ।

छड्ढापेति—छर्दयति, छुडाता है ।

छत्त—छत्र ।

ज

जातिसुद्धज्जो—ज्ञातिसुद्धदो, बहु-मित्र ।

जानपेत्त्वा—जापयित्वा, जनाकर ।

जिने—जयेत्, जीते ।

जिनाति—जयति, जीतता है ।

झ

झायति—ज्ञायते, नष्ट होता है ।

झायिनो—व्यायिनः, ध्यान करनेवाले का ।

ञ

जत्त्वा—जात्वा, जानकर ।

जाति—ज्ञाति, बंधु ।

ठ

ठत्त्वा—स्थित्वा, ठहरकर ।

ठपित्त—स्थापित्त, रखना हुआ ।

ठपेत्त्वा—स्थापयित्वा, रखकर, छोड़कर ।

त

तज्जेसि—धमकाया ।

विकिच्चक—विकित्सक, वैद्य ।

गण्ड-कोष

तिविधगिग—त्रिविधाग्नि, तीन प्रकार की अग्नि ।

तखण्णे—तन्त्रण्णे, उभौ समय ।

थ

थम्भ—स्तम्भ ।

थेगे—स्थविरो, वृद्ध ।

द

द्वादसवस्मच्चयेन—द्वादशवर्षात्प्येन, बाग्ट वर्ष के बाद ।

दिन्न—इत्तं, दिया गया ।

दुर्गत—दुर्गत, दुर्गति ग्रस्त ।

दुम्भेधान—दुर्मधमाम्, दुर्युद्धिया का ।

ध

धीता—दुहिता, लड़की ।

धूम काले—धूम्र काले, मरण समय में ।

न

निष्कृत्ति—निष्कृत्तिम्, कुशलता ।

निसिन्न काले—निष्पण काले, बैठने के समय ।

निवल्मिष्ठु—निष्कृत्तिम्, निकले ।

नेमित्तिके—नेमित्तिकान्, निमित्त जाननेवाला को (उद्योतिपी आदि) ।

५

पटिञ्ज—प्रतिज्ञा ।

पटिपचल—प्रतिपक्ष, विपरीत ।

परियोसिते—पर्यवसिते, समाप्त होने पर ।

पुग्गल—पुद्गल, जीव ।

पातो—प्रातः, सबेरे ।

पञ्जा—प्रजा, बुद्धि ।

पहाय—प्रहाय, त्यागकर ।

फ

फलित—पलितं, पका हुआ ।

ब

बोधेति—बोधयति, ब.ध कराता है ।

भ

भातिकेहि सद्धि—भ्रातृकैः सार्धम्, भाइयों के साथ ;
मिञ्जनाकारणात्ता—मेदनाकारप्राप्ता, फूटने योग्य ।

म

मग्गो—मार्गः ।

मच्चु—मृत्युः ।

मच्छरी—मत्सरी ।

मज्झिम—मध्यम ।

मनापा—मनश्चाप्या—हृदयगम ।

मारापेत्वा—मारयित्वा, वध कराके ।

मुमा—मृषा ।

मेत्त — मैत्र ।

य

यस—यशः ।

याचि—अयाचिष्ट, याचना की ।

र

रक्खा—रक्षा ।

रहं—राष्ट्रम् ।

ल

लहु—लघु, क्षुद्र, हलका ।

लद्धं—लब्धम्, प्राप्त हुआ ।

लामकस्म—तुच्छ, लुट् ।

लुह—रुट्, भयकर ।

लुहक—लुब्धक, बहेलिया ।

व

वस्सिकी—(देगी शब्द), चमेली ।

विरिय—वीर्यम् ।

विनिच्छिन्नन्ति—विनिश्चिन्नन्ति, विनिश्चय करते हैं ।

विजायि—व्यजनिष्ट, उत्पन्न क्रिया ।

विलुम्भापेति—विलोपयति, नाग कगता है ।

व्यक्तो—व्यक्तः, स्पष्ट, पंडित के अर्थ में भी इसका प्रयोग पाया जाता है ।

स

सक्को—शक्रः, इंद्र ।

सङ्कारा—मस्कार ।

सचे—चेत्, यदि ।

सन्धव—सस्तव, परिचय ।

शरीरकिञ्च—शरीरकृत्यं, शरीरमस्कार ।

मुखल—शुष्क. सूवा ।

सुष्टु—सुष्ठु, सुंदर ।

सिया—स्यात्, हो ।

सेथ्यो—भेयः, कल्याणकर ।

संवन्दर—संवत्सर, वर्ष ।

सञ्जा—सजा ।

सञ्जोग—सयोग ।

सत्या—शास्ता, शासन करनेवाला, यह शब्द बुद्ध भगवान् के लिये आया है ।

सद्धानः—श्रद्धावानः, श्रद्धा करनेवाला ।
 सावको—श्रावकः, बौद्ध-धर्म में प्रविष्ट ।
 सावत्थियं—श्रावस्त्या, श्रावस्ती नाम की नगर।
 सिरिगम्भ—श्रीगर्भम्, राजा का शयन-गृह ।
 मेट्ठी—श्रेष्ठी, सेठ ।
 सेय्यथा—तद्यथा ।

ह

हञ्जति—हन्यते, मारा जाता है ।
 हिरि—हीः, लज्जा ।
 हेट्ठा—नीचे ।

गंगा-सुस्तकमाला वा १०४वां पुष्प

कुंडली-चक्र

[मौलिक उपन्यास]



पृ. दाशनलाल वर्मा